परमेश्वर-कृत उद्धार

PARMESHWAR-KRIT UDDHAR

Adapted into Hindi by : J.P. Pandey
Assisted by : R.K. Khullar & B.K. Kindo

This Hindi edition has been published by the Fellowship Bible Church, Winchester (U.S.A.) and is based on their English title CREATION TO CHRIST FOR GROWING BELIEVERS. Copyright Fellowship Bible Church, 3217 Middle Road, Winchester, VA.-22602 (U.S.A.).

First Hindi Edition : December-2005

Printed in Nepal

विषय सूची

1. सृष्टिकर्ता एवं सृष्टि
2. आदम और पाप
3. हाबिल और नूह
4. अब्राहम और लूत
5. अब्राहम की परीक्षा
6. इस्राएल और मूसा
7. व्यवस्था और मिलाप–तम्बू
8. राजाओं और नबियों का काल
9. प्रतिज्ञात मसीह
10. विश्वासी–जीवन
11. प्रभु यीशु : सेवा एवं शिक्षा
12. प्रभु यीशु : मृत्यु एव पुनरुत्थान
13. नया जन्म
14. अनुग्रह आधारित परिवर्तन
15. विश्वसनीय परमेश्वर
16. सुनिश्चित उद्धार
17. अनन्त उद्धार

1

सृष्टिकर्ता एवं सृष्टि

अपने चहुँओर देखने पर हमें जो चीजें दिखाई देती हैं, उनमें क्या ऐसी कोई चीज़ भी है जिसकी कोई शुरुआत नहीं? सब कुछ शुरू होने से पूर्व क्या कोई जीवित था? वह कौन था? पवित्र बाइबॅल के अनुसार केवल एक ही जीवित परमेश्वर है; परन्तु उसने अपने आप को **पिता** परमेश्वर अर्थात् सृष्टिकर्ता, **पुत्र** परमेश्वर अर्थात् उद्धारकर्ता और **पवित्र आत्मा** परमेश्वर अर्थात् शांतिदाता के रूप में प्रकट किया है। पवित्र शास्त्र में इन तीनों को ईश्वरीय गुण, महिमा एवं स्वभाव से सम्पन्न दर्शाया गया है। परमेश्वर का त्रिएकत्व मानव-बुद्धि की समझ से परे है। इस ईश्वरीय सच्चाई को सिर्फ आध्यात्मिक तौर पर समझा जा सकता है। पवित्र शास्त्र के उत्पत्ति 1:1 एवं 1:26 पर ध्यान दें, जहाँ परमेश्वर के लिए मूल भाषा इब्रानी में बहुवचन शब्दों का प्रयोग हुआ है। कहने का मतलब यह है कि प्रभु परमेश्वर ने अपने त्रिएकत्व को आदि काल से ही प्रकट किया है।

परमेश्वर की शुरुआत कब हुई? क्या वह किसी के द्वारा सृजा गया? क्या उसने स्वयं अपने आप को रचा? क्या ऐसा कोई समय भी था जब कि परमेश्वर का अस्तित्व नहीं था? हमें खाने के लिए भोजन, पीने के लिए पानी और सांस के लिए वायु तथा दृष्टि के लिए रोशनी की ज़रूरत है? प्रभु परमेश्वर को अपने अस्तित्व के लिए किस चीज़ की ज़रूरत है? केवल प्रभु परमेश्वर ही सब वस्तुओं एवं व्यक्तियों से महान है। उदाहरणार्थ : वह पृथ्वी, सूरज, चाँद, तारों, शैतान और दुष्टात्माओं इत्यादि से बहुत अधिक महान है। प्रभु परमेश्वर से बढ़ कर महान अन्य कोई नहीं है।

प्रारम्भ में पृथ्वी और आकाश को किसने रचा? शैतान ने नहीं, और न ही दुष्टात्माओं ने? केवल प्रभु परमेश्वर ने ही किसी चीज़ के बगैर (शून्य से) सब कुछ रचा। प्रभु परमेश्वर सभी वस्तुओं को बनाने में समर्थ है, क्योंकि वह एक ही समय सब जगह उपस्थित है। आप ऐसी किसी जगह नहीं जा सकते जहाँ वह नहीं है। वह सब जगह सदैव उपस्थित है। वह एक ही समय अपनी प्रत्येक संतान के साथ उपस्थित है। हम कभी अकेले नहीं हैं। परमेश्वर सदैव हमारे साथ है। उसकी यह प्रतिज्ञा है कि वह अपने विश्वासियों को न तो छोड़ता है और न ही त्यागता है। प्रभु परमेश्वर सर्वत्र उपस्थित है।

पृथ्वी और आकाश की रचना हेतु परमेश्वर ने क्या चीज़ इस्तेमाल किया? वह बिना किसी वस्तु को इस्तेमाल किए सब चीज़ों की रचना करने में समर्थ था। क्योंकि वह सर्वशक्तिमान है। परमेश्वर सब कुछ करने में समर्थ है। हम उस पर पूरा भरोसा कर सकते हैं, क्योंकि वह सर्वसामर्थी है। परमेश्वर को आकाश और पृथ्वी तथा इनकी सारी चीज़ों को बनाने के तौर-तरीकों का ज्ञान कैसे हुआ? क्या किसी ने उसे इसका प्रशिक्षण दिया? परमेश्वर को कुछ भी सीखने की ज़रूरत नहीं है। वह सब कुछ जानता है। मेरे और आप के बारे में ऐसी कोई भी बात नहीं है जिसे परमेश्वर पहले से ही नहीं जानता। वह आपकी सारी समस्याओं को जानता है। वह आपके रोग, भय एवं आवश्यकताओं के बारे में सब कुछ जानता है। हाँ, दूसरे लोग आपकी इन बातों या समस्याओं के बारे में नासमझ (गलतफहमी में) हो सकते हैं; परन्तु आपका पिता परमेश्वर नहीं। वह आपको पूरी तौर से जानता-समझता है। प्रभु परमेश्वर आपको जिस तरह से जानता-समझता है, उस तरह से अन्य कोई व्यक्ति आपको नहीं समझता। परमेश्वर आपके प्रत्येक बात-विचार को जानता, समझता है। चूंकि वह सर्वज्ञानी है, अर्थात् हमारे बारे में सब कुछ जानता है, इसलिए हम विश्वासपूर्वक उससे प्रार्थना कर सकते हैं, और सब बातों में उस पर आशा-भरोसा कर सकते हैं।

प्रभु परमेश्वर द्वारा सृष्टि रचना करने से पूर्व यह जगत कैसा था? यद्यपि उस समय पृथ्वी पर किसी वस्तु, व्यक्ति और वनस्पति की रचना नहीं हुई थी, किन्तु परमेश्वर पवित्र आत्मा सृष्टि की सारी चीज़ों की रचना के लिए तत्पर था। स्मरण रहे कि पवित्र आत्मा परमेश्वर है, उसका कोई आदि और अन्त नहीं है। सृष्टि रचना के कार्य को केवल पवित्र आत्मा ने ही नहीं किया। पिता परमेश्वर, पुत्र परमेश्वर और पवित्र आत्मा परमेश्वर तीनों ने मिलकर पूरा किया।

प्रथम दिन : जिस प्रकार सृष्टि-रचना के समय प्रभु परमेश्वर की सामर्थ्य ने जगत में उजियाला पैदा करके क्रान्तिकारी परिवर्तन ला दिया, उसी प्रकार हमारे जीवन में भी हुआ। परमेश्वर की सामर्थ्य से हम अंधकार से ज्योति में लाए गये अर्थात् सत्य की अज्ञानता से सत्य के ज्ञान में। ध्यान दें कि सृष्टि के समय पृथ्वी पर परिवर्तन लाने से पूर्व पृथ्वी पूर्णतः ''बेडौल व सुनसान'' थी। परिवर्तन से पूर्व हमारा जीवन भी ऐसा ही था – भ्रमित, शैतान व दुष्टात्माओं द्वारा नियंत्रित। अब सत्य की पहचान के द्वारा शैतानी झूठ व भ्रम-जाल की अधीनता से हम मुक्त कर दिए गये हैं।

द्वितीय दिन : प्रभु परमेश्वर ने दूसरे दिन आकाश-मण्डल को सृजा।

तृतीय दिन : तीसरे दिन प्रभु परमेश्वर ने सूखी भूमि, समुद्र तथा समस्त वनस्पतियों की रचना का काम किया। उसने जल को समुद्र में इकट्ठा करके सूखी भूमि पैदा किया, और तत्पश्चात् पेड़-पौधों को पैदा किया।

चतुर्थ दिन : प्रभु परमेश्वर ने प्रतिदिन सूर्योदय एवं सूर्यास्त की रचना क्यों किया? उसने प्रत्येक माह चाँद के निकलने, धीरे-धीरे पूर्ण रूप में दिखाई देने तथा पुनः क्रमिक तौर से उसके घटते हुए रूप में गायब होने की रचना क्यों किया? क्योंकि परमेश्वर गड़बड़ी का परमेश्वर नहीं है, बल्कि वह तो सुव्यवस्था का परमेश्वर है। उसने सूरज, चाँद, तारों को इसलिए रचा ताकि हम दिनों, महीनों, ऋतुओं एवं वर्षों की गणना कर सकें। परमेश्वर-कृत प्रत्येक चीज़ सही, सिद्ध व भली होती है। जैसे दिनों, महीनों, ऋतुओं व वर्षों पर परमेश्वर के नियंत्रण के बारे में

हम भरोसा करते हैं, उसी प्रकार उसके विश्वासियों के लिए उसके वचन में परमेश्वर के सभी वायदों पर भी हम भरोसा रख सकते हैं।

पाँचवाँ दिन : पाँचवें दिन प्रभु परमेश्वर ने समस्त जल-जन्तुओं एवं पक्षियों की रचना का कार्य पूर्ण किया।

छठवाँ दिन : छठवें दिन असंख्य एवं विविध प्रकार के जीव-जन्तुओं की रचना की गई। कितना रोचक है कि प्रत्येक पेड़-पौधा एवं जीव-जन्तु अपने ही विशिष्ट प्रकार के पेड़-पौधे व जीव-जन्तु को उत्पन्न किया।

परमेश्वर-कृत प्रत्येक वस्तु परमेश्वर की दृष्टि में भली थी। बेशक, परमेश्वर द्वारा कही गई प्रत्येक बात और उसके द्वारा किया गया प्रत्येक कार्य भला ही होता है। क्यों? क्योंकि वह पवित्र है। वह कोई गलती या बुराई नहीं कर सकता। कभी-कभी अपने जीवन की परिस्थितियों व घटनाओं को हम ठीक से नहीं समझ पाते, लेकिन हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि परमेश्वर-कृत सभी बातें सही व पवित्र होती हैं।

प्रभु परमेश्वर ने सब कुछ इतना सुन्दर क्यों बनाया? उसने पानी क्यों बनाया? खाने के लिए विभिन्न प्रकार के फल व सब्जियाँ क्यों बनाया? यह सब उसके प्रेमी स्वभाव का परिचायक है। चूंकि वह हमसे प्रेम करता है, इसलिए इन सब सुन्दर व स्वादिष्ट वस्तुओं को भरपूरी से प्रदान किया, ताकि हम इनका आनन्द ले सकें। आज भी सारी भली वस्तुओं का दाता वही है। यहाँ तक कि हमारे बदले क्रूस पर बलिदान देने हेतु उसने 'अपने एकलौते पुत्र' को भी दे दिया। यदि वह हमारे बदले अपने पुत्र को मरने भेज दिया तो क्या वह हमारे लिए अन्य किसी आवश्यक कार्य को नहीं करेगा? मसीही (विश्वासी) होने से पूर्व आप या तो स्वयं पर अथवा अन्य किसी शक्ति पर भरोसा रखते थे और अपनी आवश्यकतापूर्ति व आशीषों का श्रेय उन्हीं को देते थे। लेकिन अब आप जान गये हैं कि शैतान झूठा है, और केवल परमेश्वर ही हमारी सभी जरूरतों को पूरा करता है। यह समझना ज़रूरी है कि मनुष्य को सब चीज़ें प्रदान करने वाला केवल प्रभु परमेश्वर ही है। अतः

हमें आभारी मन से उसे सदैव धन्यवाद देते रहना है।

नोट : उपर्युक्त विचारों को और अच्छी तरह समझने के लिए नीचे दिए गये विचारणीय बाइबॅल-पदों का अध्ययन आवश्यक है। इस पुस्तक के प्रत्येक अध्याय के अन्त में दिए गये बाइबॅल-पदों का अध्ययन इसके संदेश को समझने में सहायक होगा।

उत्पत्ति 1:1 ; 1:26 ; 1:3-5 ; 1:6-8 ; 1:9-13 ; 1:14-19 ; 1:20-23 ; 1:24-25 , व्यव0 33:27 , भज0 90:2 ; 24:1 ; 139:8 ; 147:4-5 , यूहन्ना 4:24 , फिलि0 2:13 , इब्रानी0 11:3 ; 13:5 , यिर्म0 23:23-24 , मत्ती 19:26 , प0पत0 1:16 , प0यूहन्ना 1:5 ; 4:8 , रोमियों 8:32।

2

आदम और पाप

प्रभु परमेश्वर ने छठवें दिन जीव-जन्तुओं की रचना करने के बाद क्या किया? यह किसने कहा कि ''आओ हम मनुष्य को अपने स्वरूप में बनायें।'' त्रिएक परमेश्वर ने (अर्थात् पिता, पुत्र और पवित्र आत्मा ने), जो सब चीज़ों का सृजनहार है। परमेश्वर ने पहले आदम को बनाया। उसके बाद आदम के उपयुक्त सहायक एवं पत्नी के रूप में हव्वा को बनाया। इस प्रकार पहला मनुष्य अर्थात् आदम एक जीवित प्राणी के रूप में रचा गया। मनुष्य एक जीवित प्राणी है, और उसमें प्रभु परमेश्वर से संचार-सम्पर्क रखने की क्षमता है। मानव प्राणी में मन, इच्छा एवं भावना (संवेग) पाई जाती है। वह परमेश्वर की संगति का रसास्वादन कर सकता है, क्योंकि उसमें परमेश्वर के समान मन, इच्छा व भावना है। आदम के स्वरूप का परमेश्वर के समान होना भौतिक या शारीरिक समानता को नहीं बल्कि आन्तरिक व्यक्तित्व सम्बन्धी समानता को दर्शाता है।

प्रभु परमेश्वर असीमित, असृजित, अनन्त एवं स्वर्गिक है तथा सभी प्रकार के जीव-जन्तुओं एवं प्राणियों का एकमात्र जीवन-स्रोत है। इसके विपरीत आदम सीमित, सृजित एवं पार्थिव था। परमेश्वर और मनुष्य के अस्तित्व में अन्तर व पृथकता थी, किन्तु उनके व्यक्तित्व में आन्तरिक समानताएं भी थीं। इस प्रकार मनुष्य को प्रभु परमेश्वर ने अपने ''स्वरूप'' में रचा। इसीलिए परमेश्वर-कृत मनुष्य को पृथ्वी का अधिकार सौंपा गया। आदम को, परमेश्वर ने आदम से पैदा होने वाली सारी मानव जाति के स्रोत अर्थात् आदि-पिता एवं प्रतिनिधि-मानव के रूप में रचा। प्रभु परमेश्वर ने आदम को पृथ्वी की देख-रेख करने और परमेश्वर पर आशा-भरोसा रखने तथा उसी की संगति में बने रहने के लिए रचा।

ईश्वरीय इच्छा के अनुसरण हेतु, आदम को परमेश्वर की ओर से स्पष्ट एवं सीधे-सादे निर्देश दिए गए थे। परमेश्वर प्रदत्त इन निर्देशों को आदम ने हव्वा को भी बताया होगा। परमेश्वर के साथ उत्तरदायित्वपूर्ण एवं प्रेमपूर्ण सम्बन्ध विकसित करने के लिए आदम-हव्वा को पसन्दगी, चयन यानि चॉएस (choice) का अधिकार देना भी ज़रूरी था, अन्यथा उनका यह सम्बन्ध केवल बंधुआ मजदूर जैसा ही होता। उन्हें यह अधिकार प्रदान किया गया था कि वे चाहें तो अनन्त जीवन के मार्ग को चुन लें अर्थात् परमेश्वर की इच्छा पर विश्वास करके उसे स्वीकार करें, या फिर उसकी इच्छा पर अविश्वास करते हुए उसका इनकार करें और अनन्त मृत्यु का मार्ग चुनें। परमेश्वर के प्रति किसी भी प्रकार का अविश्वास और उसकी इच्छा (आज्ञा) का किसी भी प्रकार से इनकार (आज्ञा-उल्लंघन), पाप है। परमेश्वर ने कहा था कि उसकी आज्ञा का उल्लंघन करने पर आदम मर जाएगा। इसका क्या मतलब था? इसका तात्पर्य यह था कि प्रभु परमेश्वर की संगति से आदम तत्काल अलग हो जाएगा, आगे चल कर वह शारीरिक मृत्यु का शिकार होगा और अन्ततः नरक में अनन्त मृत्यु पाएगा। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि अदन की वाटिका में प्रभु परमेश्वर द्वारा आदम के लिए सभी आवश्यक प्रबन्ध कर दिए गये थे। अब परमेश्वर सिर्फ यह चाहता था कि आदम प्रभु पर इतना भरोसा रखे कि उसकी आज्ञा का पालन करे। आदम को सिर्फ परमेश्वर पर तथा उसके वचन पर विश्वास व भरोसा रखना था।

शैतान तो झूठ का पिता है और धोखा देने में माहिर है। उसने परमेश्वर की बात के प्रति हव्वा के मन में संदेह पैदा किया – ''क्या परमेश्वर ने सचमुच कहा है...?'' इस प्रकार हव्वा के मन में परमेश्वर की बात के बारे में अस्पष्टता आई। वह ''बेखटके'' खाने और ''अवश्य मर'' जाने सम्बन्धी आज्ञाओं को भूल गई। इतना ही नहीं, शैतान से बात करते समय वृक्ष के फल को ''न छूने'' की बात जोड़ कर उसने परमेश्वर की आज्ञा में अपनी ओर से मिलावट किया। परमेश्वर ने वह फल ''नहीं छूने'' की बात नहीं कही थी। इस प्रकार (परमेश्वर के वचन

की) अज्ञानता में हव्वा बर्बादी का शिकार हो रही थी। अतः शैतान ने अपने अगले वाक्य में परमेश्वर के स्वभाव के बारे में हव्वा के मन में झूठ भर कर, परमेश्वर के प्रति और अधिक अविश्वास व संदेह पैदा किया। अन्ततः हव्वा ने परमेश्वर (की बात) पर विश्वास नहीं किया। इसका नतीजा यह हुआ कि हव्वा ने ईश्वरीय आज्ञा का उल्लंघन किया। इस विवरण सम्बन्धी बाइबॅल-पद हव्वा की अहं-केन्द्रित अवस्था को दर्शाते हैं। उसके सोच-विचार में परमेश्वर का कोई स्थान नहीं था। अतः हव्वा को धोखा देने में शैतान सफल हुआ, और उस स्त्री ने परमेश्वर पर नहीं बल्कि शैतान की बात पर विश्वास किया। नतीजतन हव्वा ने वर्जित फल को खा लिया। परन्तु परमेश्वर की आज्ञा के बारे में आदम भ्रमित नहीं था। उसे परमेश्वर की आज्ञाओं का स्पष्ट ज्ञान था। अतः आदम का अविश्वास (आज्ञा-उल्लंघन रूपी पाप) परमेश्वर के प्रति जान बूझ कर किया गया विद्रोह था।

प्रमुख समस्या (परमेश्वर पर) विश्वास अथवा (उस पर) अविश्वास की है, न कि आज्ञाकारिता और अनाज्ञाकारिता। विश्वास आज्ञा-पालन पैदा करता है, अविश्वास आज्ञा-उल्लंघन। पतन के पश्चात् आदम और हव्वा, परमेश्वर के प्रेम एवं सामर्थ्य पर आशा-भरोसा रख कर जीवन व्यतीत करने के बजाय, अपने अहं-बल के भरोसे जीवन व्यतीत करने लगे। आदम-हव्वा के अविश्वास एवं आज्ञा-उल्लंघन के परिणामस्वरूप उनकी आत्मिक मृत्यु हुई – वे अपने जीवन-स्रोत्र, अर्थात् परमेश्वर की संगति व सामीप्य से अलग हो गये। अब वे परमेश्वर के घराने (वंशजों) में नहीं थे। उनकी रचना के समय उनमें जैसा आध्यात्मिक जीवन अर्थात् परमेश्वर के प्रति जागरूकता (जीवंतता) थी, वह अब उनमें नहीं रही। अब आदम-हव्वा ने पाप-स्वभाव ग्रहण कर लिया था। अब उनमें बुराई करने की सतत् आन्तरिक इच्छा उत्पन्न हो रही थी। उनका आन्तरिक मन व स्वभाव उनकी समझ से परे तक भ्रष्ट हो चुका था। प्रभु परमेश्वर के साथ उनकी संगति-सहभागिता समाप्त हो चुकी थी। अब तो वे परमेश्वर के शत्रु हो गये थे। इसलिए उन्हें उस विशिष्ट वाटिका से निकाल दिया

गया, जिसे प्रभु परमेश्वर ने उनके लिए बनाया था। अब तो उन्हें कांटे-ऊँटकटारे उगाने वाली धरती पर बड़े परिश्रम के साथ, माथे के पसीने की रोटी खानी थी।

शारीरिक मृत्यु, आत्मिक मृत्यु का ही एक परिणाम है। अतएव आदम-हव्वा भी अन्ततः शारीरिक मृत्यु का शिकार हुए। आदम और हव्वा के अविश्वास एवं आज्ञा-उल्लंघन के कारण पूरी पृथ्वी तथा उस पर सृजित सारी चीजें पाप के श्राप के अधीन हो गईं। आदम-हव्वा की आत्मिक मृत्यु के बाद किन्तु उनकी शारीरिक मृत्यु से पूर्व उनके संतान पैदा हुए। आदम से पैदा हुए सभी लोग पाप-स्वभाव (शारीरिकता) लेकर पैदा होते हैं। इस प्रसंग में स्मरणीय बात यह है कि परमेश्वर-कृत सृष्टि का हरेक पेड़-पौधा, जीव-जन्तु एवं फल-फूल अपने समान पेड़-पौधा, जीव-जन्तु एवं फल-फूल को पैदा करता है। आदम और हव्वा इसके अपवाद नहीं थे। अदन की वाटिका से निष्कासित किए जाने के बाद ही उनके शारीरिक संतान पैदा हुए – अर्थात् परमेश्वर से अलगाव की अवस्था में। प्रत्येक मनुष्य पापपूर्ण व अहं-केन्द्रित जीवन-स्वभाव के अधीन जन्म लेता है, जो कि सारी मानव जाति के पार्थिव माता-पिता, आदम से मिला है। हम ''अपराधों व पापों के कारण मरे हुए... स्वभाव से ही क्रोध की सन्तान... और आशाहीन तथा संसार में परमेश्वर-रहित'' अवस्था में पैदा होते हैं। आदम-हव्वा के पतित वंश में पैदा होने के कारण हम पाप करते रहते हैं। या यूँ कहें कि हम आध्यात्मिक तौर पर दिवालिया पैदा हुए हैं।

अब आदम-हव्वा तथा उनके वंशजों को ऐसे किसी व्यक्ति की आवश्यकता थी जो उन्हें उनके अविश्वास एवं आज्ञा-उल्लंघन के परिणामों से बचा सके, ऐसा कोई जन जो परमेश्वर के प्रति मनुष्य के विद्रोह रूपी पाप का दण्ड-मूल्य चुकता करने को तत्पर हो और मनुष्य को उसकी आशाविहीनता एवं परमेश्वर-विहीनता की अवस्था से मुक्त करके, परमेश्वर के साथ उसकी संगति-सहभागिता को पुर्नस्थापित कर सके। परन्तु उस व्यक्ति को ऐसा व्यक्ति होना था जो हरेक मायने में

पूर्णतः दोष-रहित हो और ईश्वरीय आज्ञाओं के आज्ञा-पालन में पूर्णरूपेण सिद्ध हो। केवल ऐसा, हाँ केवल ऐसा व्यक्ति ही परमेश्वर के समक्ष ग्रहण-योग्य एवं इस मुक्ति-प्रद कार्य के योग्य होता। चूँकि सारी मनुष्य जाति के हरेक जन ने पाप किया है, अतः हममें से कोई भी जन मुक्ति के इस कार्य को पूरा करने के योग्य नहीं है। अब एक ही उपाय था कि स्वयं प्रभु परमेश्वर मानव इतिहास में कदम रखता, मानव जाति में जन्म लेकर शैतान के विनाश हेतु समस्त ईश्वरीय मांग को पूरा करता और मानव जाति का परमेश्वर से मेल-मिलाप कराता।

पिता परमेश्वर ने प्रभु यीशु अर्थात् अपने ''प्रिय पुत्र'' को इस पृथ्वी के नये 'उत्तराधिकारी या शासक' के रूप में भेजा। आदम-हव्वा की तरह यीशु की भी परीक्षा हुई, किन्तु वह पूर्णरूपेण विजयी रहा। शैतान ने यीशु को भोजन, सत्ता व अभिलाषा की प्रलोभन-परीक्षा में फँसाने का पूर्ण प्रयास किया। प्रत्येक परीक्षा के समय, परमेश्वर के वचन में अपना पूर्ण विश्वास दर्शाते हुए, यीशु ने दृढ़तापूर्वक शैतान का सामना किया। परमेश्वर के प्रति अविश्वास एवं अवज्ञा का व्यवहार करने वाले आदम-हव्वा के विपरीत मानव जाति के लिए परमेश्वर द्वारा भेजे गए इस नये प्रतिनिधि (यीशु) ने परमेश्वर पर पूर्ण विश्वास व भरोसा रखा।

बहरहाल, पाप में पतन के बाद आदम और हव्वा की ''आँखें'' खुल गईं और वे यह समझने लगे कि (शारीरिक तौर पर) नंगे हैं। पाप के कारण उनकी निर्दोषिता खत्म हो गई और परमेश्वर के साथ उनकी संगति भी जाती रही। तब वे उस वाटिका में छिपने लगे और अंजीर के पत्तों से वस्त्र बना कर स्वयं को ढक लिए। परन्तु उन्होंने जो कुछ किया था उसे (अर्थात् उनकी अवज्ञा को) ढंकने के लिए, उनके द्वारा किया गया यह कर्म-प्रयास प्रभु परमेश्वर को स्वीकार्य नहीं था। अतः उनकी अवज्ञा को अस्थाई तौर पर ढकने हेतु परमेश्वर ने दया करके स्वयं पहल किया। एक निर्दोष पशु को वध करके, उसके चमड़े से परमेश्वर ने उनके लिए वस्त्र बनाया। इस प्रकार स्वयं प्रभु परमेश्वर ने आदम और हव्वा को चर्म-वस्त्र पहनाया।

परमेश्वर के मार्ग अदभुत हैं, और हमारी भलाई इसी में है कि हम उसके मार्ग में ही आशा-भरोसा रखें। अपनी शक्ति, भक्ति व युक्ति के द्वारा मनुष्य स्वयं को परमेश्वर के समक्ष ग्रहणयोग्य बनाने में सदैव असमर्थ है। परमेश्वर के समक्ष हमारी स्वीकार्यता हमारे कामों पर नहीं, बल्कि हमारे लिए परमेश्वर द्वारा किए गये काम (उपाय) पर आधारित है। खुशखबरी यह है कि अब हमें स्वयं को परमेश्वर से छिपाने की ज़रूरत नहीं है, क्योंकि मानव जाति के नये प्रतिनिधि-पुरुष (मसीह) द्वारा किए गये काम के आधार पर प्रभु परमेश्वर ने हमें ग्रहण कर लिया है। प्रभु परमेश्वर ने तो अदन की वाटिका में यह वायदा कर दिया था, कि भविष्य में वह एक मुक्तिदाता को भेजेगा, और यीशु ही वह प्रतिज्ञात् मुक्तिदाता है। वही **दूसरा आदम** है जिसे परमेश्वर ने पृथ्वी का उत्तराधिकारी (शासक) होने के लिए भेजा। यह दूसरा आदम अर्थात् अन्तिम आदम ''जीवनदायक आत्मा बना''। प्रभु यीशु हमारे शत्रुओं पर विजयी होने तथा आदम को प्रारम्भ में प्रदान किया गया अधिकार हमें वापस दिलाने आया। पृथ्वी पर से स्वर्ग में उठा लिए जाने से पूर्व प्रभु यीशु ने यह कहा, ''स्वर्ग और पृथ्वी का सारा अधिकार मुझे दिया गया है''। स्वर्ग में उसका अधिकार है, क्योंकि वह परमेश्वर है। पृथ्वी का उत्तराधिकारी भी वही है, क्योंकि पिता ने उसी को सम्पूर्ण पृथ्वी का शासन-अधिकार सौंप दिया है।

प्रभु यीशु मसीह पर विश्वास करने से पूर्व हम आदम के घराने के थे। पाप में पतन के कारण, परमेश्वर के साथ आदम ने अपने श्रेष्ठ सम्बन्ध को खो दिया। इसके फलस्वरूप हमने भी परमेश्वर के साथ अपना सम्बन्ध खो दिया। परन्तु परमेश्वर के मुक्ति-प्रद कार्य और मसीह पर हमारे विश्वास के द्वारा अब हम परमेश्वर की संतान हो गये हैं। अर्थात् अब परमेश्वर के घराने में हमारा पुनः (नया) जन्म हो गया है। स्मरण रहे कि परमेश्वर के समक्ष मसीह यीशु अपनी श्रेष्ठ-स्थिति कभी नहीं खो सकता, और चूंकि अब हम ''मसीह में'' परमेश्वर की संतान हैं, अतः परमेश्वर के समक्ष अपनी स्वीकार्यता (नये सम्बन्ध) को हम भी नहीं खो सकते। प्रभु यीशु के विश्वासी को एक नया स्वभाव मिलता है।

सैद्धान्तिक तौर पर (परमेश्वर की दृष्टि में) हमारा पुराना स्वभाव अर्थात् आदम से प्राप्त पाप-स्वभाव अब मर चुका है। अब मानव जाति के नये प्रतिनिधि (मसीह) के कारण, विश्वासीजन परमेश्वर के घराने में हैं। पहला कुरिन्थियो 1:30 के अनुसार विश्वासीजन ''मसीह में'' है। प्रभु परमेश्वर ने हमें 'मसीह में एवं अपने घराने में' स्थापित कर दिया है। प्रत्येक मसीही विश्वासी की यही आत्मिक स्थिति (हैसियत) है। वह अब परमेश्वर के घराने में जन्म ले चुका है। अतः अब वह आत्मिक दिवालियापन के बजाय आध्यात्मिक भरपूरी में (नया) जन्म ले चुका है। इस प्रकार विश्वासियों को एक नया स्वभाव मिला है। वे ''मसीह में'' एक नई सृष्टि हैं। अब उन्हें पुराने स्वभाव (पुराने मनुष्यत्व या पाप-स्वभाव) की शासन-सत्ता व अधीनता से छुड़ा लिया गया है। यह एक ऐसी सैद्धान्तिक सच्चाई है जिसकी सत्यता में हमें पूर्ण विश्वास-विश्राम करना है, और समय के साथ-साथ इस सच्चाई को अपने व्यवहारिक जीवन में कार्यान्वित किए जाने के लिए प्रभु परमेश्वर पर आशा-भरोसा रखना है।

इफिसियो की पत्री के 1:3 के अनुसार ''मसीह में'' परमेश्वर पिता ने हमें समस्त आत्मिक आशीषों से आशीषित कर दिया है। उसकी समस्त आध्यात्मिक आशिषें हमारी हो चुकी हैं। वह हमें आशीषित कर चुका है। ''मसीह में'' परमेश्वर ने हमें जो कुछ प्रदान कर दिया है, उसके अलावा और कुछ प्राप्त करके हम और आत्मिक नहीं बनेंगे। इफिसियो की पत्री (1:4-7) के विचारों के क्रमिक विकास पर ध्यान दें : ''मसीह में'' परमेश्वर ने हमें चुन लिया है, उसने अपनी इच्छा के भले अभिप्राय के अनुसार ''मसीह के द्वारा'' हमें अपना लेपालक पुत्र ठहराया है, परमेश्वर अपने अनुग्रह से ''उस प्रिय'' में हमें स्वीकार कर लिया है, हमें उसके अनुग्रह के धन के अनुसार ''उसके लहू के द्वारा'' छुटकारा अर्थात् अपराधों की क्षमा मिली है। इस पत्री के आगे के अध्यायों पर ध्यान देने से यह सच्चाई और स्पष्ट हो जाती है कि प्रभु परमेश्वर अपने विश्वासी के लिए कितना अधिक किया है, और करता रहेगा। प्रमुख बात यह है कि यह सब आशिषें मनुष्य के धर्म-कर्म व

प्रयास का परिणाम नहीं हैं, बल्कि मनुष्य के लिए परमेश्वर द्वारा किए गये कार्य के परिणाम हैं। पवित्र आत्मा हमारे मन में इन सच्चाईयों का जैसे-जैसे परिचय कराता जाता है, वैसे-वैसे हम इन सच्चाईयों को विश्वास के साथ अपनाना सीखते हैं। इन सच्चाईयों को विश्वासी जन पैदा नहीं करता, बल्कि वह इन आत्मिक सच्चाईयों (आशिषों) को अपने जीवन में ग्रहण करता जाता है, क्योंकि वह तो परमेश्वर के घराने में (का हो चुका) है। इस संदर्भ में इफिसियो की पत्री के पहले तीन अध्यायों में ''मसीह में'', ''उसमें'', ''उसके अनुसार'' जैसे शब्द बारम्बार प्रयोग हुए हैं।

परमेश्वर की दृष्टि में दो प्रतिनिधि-पुरुष हैं : प्रथम आदम और द्वितीय आदम। अब विश्वासी लोग द्वितीय आदम अर्थात् **मसीह** से जुड़ गये हैं; जो कि उनका जीवन स्रोत है। प्रभु यीशु में प्राप्त आध्यात्मिक आशिषों के सम्बन्ध में इन सच्चाईयों पर ध्यान दें :–

- परमेश्वर के वचन के अनुसार विश्वासीजन को ऐसा जीवन मिला है जिसे वह खो नहीं सकता अर्थात् ''मसीह में'' अनन्त जीवन।
- पवित्र वचन के अनुसार विश्वासीजन का परमेश्वर के साथ मेल-मिलाप का जो सम्बन्ध स्थापित हुआ है, वह अपरिवर्तनीय है।
- विश्वासी को वह धार्मिकता प्रदान की गई है जो मलिन या कलुषित नहीं हो सकती।
- विश्वासियों की परमेश्वर के समक्ष ''मसीह में'' स्वीकार्यता पर कोई सवाल नहीं खड़ा किया जा सकता।
- विश्वासियों का ऐसा न्याय हो चुका है जैसा कि उनके साथ फिर कभी नहीं किया जा सकता।
- विश्वासीजन को वह नाम, उपाधि व हक़ मिला है, जिस पर कोई संदेह नहीं।
- विश्वासियों को वह श्रेष्ठ-स्थिति प्रदान की गई है, जिसकी मान्यता कभी खत्म नहीं होगी।

- विश्वासीजन को ऐसा दर्ज़ा दिया गया है जिसके बारे में कोई विवाद नहीं हो सकता।
- ''मसीह में'' विश्वासियों को ऐसा निर्दोष घोषित किया गया है, जिसे पलटना असंभव है।
- विश्वासियों पर (पवित्र आत्मा की) ऐसी छाप लगी है, जिसका उल्लंघन नहीं किया जा सकता।
- उन्हें ऐसी मीरास मिली है जिसे कभी छीना नहीं जा सकता।
- विश्वासियों को ऐसी अनन्त (आध्यात्मिक) सम्पदा मिली है, जो कभी खत्म नहीं होगी।
- ऐसा आध्यात्मिक बैंक मिला है, जो कभी बन्द नहीं होगा।
- विश्वासियों को ऐसा अधिकार, कब्जा या स्वामित्व मिला है जिसे नापा नहीं जा सकता।
- उन्हें ऐसा हिस्सा मिला है जिसमें कोई हस्तक्षेप, मनाही या रुकावट नहीं।
- विश्वासीजन को ऐसी शान्ति प्राप्त हुई है, जो नष्ट नहीं की जा सकती।
- विश्वासियों को (पवित्र आत्मा-प्रदत्त) ऐसा आनन्द मिला है, जिसकी कोई सीमा नहीं।
- उन्हें ऐसा अद्‌भुत अनुग्रह मिला है, जिस पर कभी कोई रोक नहीं।
- विश्वासियों को ऐसी सामर्थ्य मिली है जो कभी कमजोर नहीं की जा सकती। यह प्रभु की सामर्थ्य है, जो हमारी दुर्बलता में ही (सिद्ध) प्रमाणित होती है।
- उन्हें ऐसी शक्ति प्राप्त है, जो कभी समाप्त नहीं होगी।
- विश्वासीजन को ऐसी मुक्ति मिली है, जिसे कभी निरस्त नहीं किया जा सकता।

- उन्हें ऐसी क्षमा मिली है, जो कभी रद्द नहीं की जा सकती।
- विश्वासियों को ऐसा छुटकारा मिला है, जो निष्फल नहीं हो सकता।
- विश्वासी को ऐसी संरक्षा प्राप्त है, जिसमें कभी कोई रुकावट नहीं।
- विश्वासीजन को ऐसी निश्चयता प्राप्त है, जिसमें कोई बदलाव नहीं आ सकता।
- विश्वासियों में ऐसा 'पुराना स्वभाव' है जिसे सत्ता-विहीन या शक्ति-विहीन कर दिया गया है। उन्हें ऐसा 'नया स्वभाव' मिला है जिसमें कभी कोई हेरफेर नहीं हो सकता।
- विश्वासियों को पवित्र आत्मा के ऐसे फल मिले हैं, जिन्हें नष्ट नहीं किया जा सकता।
- विश्वासियों को ऐसी भूख मिली है, जो कभी अतृप्त नहीं रहेगी।
- विश्वासियों को ऐसी आशिषें प्राप्त हैं, जिनमें कोई व्यवधान या रोकटोक नहीं।
- विश्वासीजन को ऐसी आशा मिली है, जो कभी निराश नहीं हो सकती।

हमें ख्रीष्त में जो भरपूरी व आपूर्ति (आशिष) मिली है वह हमारे लिए पर्याप्तता से बढ़कर है; अर्थात् ''मसीह में'' हमारा नवजीवन, आध्यात्मिक भरपूरी का जीवन है। पवित्र आत्मा की सहायता से ख्रीष्त में प्राप्त आत्मिक आशिषों का विश्वासीजन को जैसे-जैसे ज्ञान होता जाता है, वैसे-वैसे वह इन सच्चाईयों को विश्वासपूर्ण प्रत्युत्तर के साथ अपनाना सीखता है। परमेश्वर द्वारा मनुष्य के लिए किए गये कार्य को विश्वासी-जीवन में अपनाते जाना ही आत्मिक विकास-प्रक्रिया है। मानव-प्रयास द्वारा धर्म-कर्म रूपी कमाई की मज़हबी कोशिश सच्चा आत्मिक विकास नहीं है। हमें पुराने की अधीनता से मुक्त करके नये की अधीनता के लिए जागृत किया गया है। अर्थात् पाप के प्रति मृतक

समान और परमेश्वर के प्रति जीवित। काश कि पवित्र आत्मा हमें इसी दिशा में सिखाता व बढ़ाता रहे।

विचारणीय बाइबॅल-पद

उत्पत्ति 1:26 ; 1:28-31 ; 2:7 ,16 ,17 ; 3:1-5 ,6 ,7 ,8 ,15 ; प0कुरि0 15:45 ,47 ,49 ; प0कुरि0 1:30 ; रोमि0 3:23 ; रोमि0 5:10अ ; 6:6 ; यूह0 8:44 ; प0तीमो0 2:14 ; यशा0 59:2 ; उत्पत्ति 5:3 ; इफि0 2:1 ,3 ,12 ; 1:3-7 ; इब्रा0 2:14 ,15 ; 4:15 ; लूका 4:1-13 ; मत्ती 4:1-11 ; 28:18 ; दू0कुरि0 5:17 ; कुलु0 2:9-10 ; 3:3-4 ; प0पत0 1:3 ; दू0पत0 1:3 ; रोमि0 6:11।

3

हाबिल और नूह

कैन और हाबिल, अदन की वाटिका से आदम के निष्कासित होने के बाद, पैदा हुए। कैन और हाबिल तथा आदम के अन्य सभी वंशज किस अवस्था में पैदा हुए? हम सब किस अवस्था में जन्म लिए हैं? चूंकि हमारा आदि-पिता आदम पापी था, इसलिए उसके वंश से उत्पन्न हम सभी पापी पैदा हुए हैं। पाप-कर्म के कारण ही नहीं, बल्कि पापी अवस्था में पैदा होने के कारण भी हम पापी हैं। हमारा पापी स्वभाव ही प्रमुख समस्या है। अदन की वाटिका से बाहर, मनुष्य की यही दशा है। परन्तु ख्रीष्त पर भरोसा करने वाले विश्वासी अब परमेश्वर से अलगाव की अवस्था में नहीं हैं। हाँ, मसीह का विश्वासी होने से पूर्व हम परमेश्वर से पृथक थे, और उसके पास वापसी के उपाय का ज्ञान नहीं था। किन्तु अब हम मसीह के द्वारा परमेश्वर की संगति में वापस लाए गये हैं। हमारा नया जन्म हो गया है। अब हम आदम के पापी घराने के नहीं हैं। अब तो प्रभु परमेश्वर हमारा पिता है, और हम उसके घराने की सन्तान हैं। उसकी सन्तान के प्रति ईश्वरीय प्रेम से हमें अलग करने में कोई भी चीज़ कामयाब नहीं होगी।

परमेश्वर की आराधना के लिए उसके समक्ष आने पर हाबिल ने क्या किया? क्या वह अपनी मनमर्जी के अनुसार परमेश्वर के समक्ष आया, या परमेश्वर के बताए उपाय के अनुसार? हाबिल परमेश्वर द्वारा बताए उपाय के अनुसार एक मेमने की भेंट लेकर परमेश्वर के समक्ष आया। अतः परमेश्वर ने हाबिल तथा उसकी भेंट को स्वीकार किया। उसकी भेंट को प्रभु परमेश्वर ने क्यों ग्रहण किया? क्योंकि हाबिल परमेश्वर पर विश्वास व भरोसा किया। अपने सीधे-सादे विश्वास के आधार पर ही हाबिल ने परमेश्वर के समक्ष भेंट चढ़ायी। प्रभु द्वारा

प्रतिज्ञात् उद्धारकर्ता भेजने सम्बन्धी ईश्वरीय वायदे पर हाबिल को विश्वास व भरोसा था। क्या उस मेमने के लहू ने हाबिल के पाप का दण्ड-मूल्य चुकाया? नहीं। परमेश्वर पर हाबिल के विश्वास ने उसे उसके पापों से बचाया। यद्यपि यीशु मसीह हाबिल की मृत्यु के बहुत वर्ष बाद क्रूस पर बलिदान हुआ, तथापि मसीह की मृत्यु ने ही हाबिल के पापों का भी दण्ड-मूल्य चुकाया।

जिस प्रकार हाबिल अपने मानव-कृत युक्ति-जुगाड़ के सहारे परमेश्वर के निकट नहीं आया, उसी प्रकार हम भी अपने बनाए मार्ग के सहारे प्रभु परमेश्वर के पास नहीं आए हैं। हम तो मसीह के बलिदान पर भरोसा करते हुए परमेश्वर के समीप आए हैं कि उसकी मृत्यु द्वारा हमारे पापों का दण्ड-मूल्य पूर्णरूपेण चुकाया गया। जैसे हाबिल की भेंट से परमेश्वर प्रसन्न हुआ, क्योंकि हाबिल परमेश्वर द्वारा बताए मार्ग से ही परमेश्वर के समक्ष गया; उसी प्रकार हमारी भेंट भी परमेश्वर को पूरी तरह स्वीकार्य है, क्योंकि परमेश्वर के समक्ष हमारे बदले मसीह द्वारा किया गया बलिदान परमेश्वर को पूर्णतः ग्रहणयोग्य है। अब अन्य किसी प्रकार के बलिदान की कोई ज़रूरत नहीं रह गयी है।

क्या परमेश्वर ने कैन की भेंट को ग्रहण किया? क्यों नहीं? क्योंकि उसने परमेश्वर (के बताए उपाय) पर विश्वास व भरोसा नहीं किया। वह स्वार्थी व स्व-केन्द्रित था। शैतान को पराजित करने और मनुष्य का उद्धार करने के लिए प्रतिज्ञात् उद्धारकर्ता भेजने सम्बन्धी ईश्वरीय वाचा एवं उपाय पर कैन ने आशा-भरोसा व विश्वास नहीं किया। कैन ने परमेश्वर के मार्ग या उपाय को नहीं अपनाया। अतएव परमेश्वर ने उसको ग्रहण नहीं किया। वर्तमान समय में हमारे लिए परमेश्वर का मार्ग (उपाय/योजना) क्या है? इस सत्य पर विश्वास व भरोसा करना कि केवल यीशु मसीह हमारे पापों का बदला चुकाने के लिए बलि हुआ। यदि हम अन्य किसी मार्ग से परमेश्वर की ओर आते हैं तो क्या वह हमें ग्रहण करेगा? नहीं! जो लोग अपने किसी मानवीय उपाय, योजना, युक्ति, शक्ति और अपनी शर्त के सहारे परमेश्वर के

पास आएंगे उन्हें वह ग्रहण नहीं करेगा। क्योंकि ऐसा करके हम यह दर्शाते हैं कि हम परमेश्वर से बेहतर जानते-समझते हैं और उसकी बात को सच नहीं मानते। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि मनुष्य के पाप-स्वभाव के कारण उसके द्वारा किए गये प्रत्येक कार्य, विचार या उपाय में पाप का दाग़ होता है। अतः यह परमेश्वर को अस्वीकार्य है।

प्रभु परमेश्वर का अनुग्रह कितना अद्‌भुत है कि उसने कैन को एक और मौका दिया। परन्तु जब परमेश्वर कैन को मन-परिवर्तन हेतु समझाने लगा (कि वह भी ईश्वरीय दृष्टि से उचित भेंट के सहारे उसके पास आ सकता है) तो कैन ने क्या किया? कैन अपने अविश्वास में ही बना रहा, जो उसे पाप की ओर ले गया। हाँ, कैन ने परमेश्वर की बात को नहीं माना। ऐसा अविश्वासी एवं स्व-केन्द्रित जीवन अनुपजाऊ, उजाड़ और निष्फल ही होता है। रोचक है कि कैन की तरह उसके भावी वंशज भी स्वार्थ-केन्द्रित रहे और परमेश्वर के मार्ग की अनदेखी करके अपनी मनमर्जी का जीवन बिताते रहे। अर्थात् परमेश्वर-विहीनता की राह पर चले। इतना ही नहीं, कैन ने हाबिल की हत्या कर दी। किन्तु कुछ समय बाद हाबिल के बदले प्रभु परमेश्वर ने एक अन्य सन्तान दी – शेत। आगे चलकर इसी शेत के वंश से परमेश्वर की ओर से प्रतिज्ञात् उद्धारकर्ता पैदा होने वाला था।

शेत के पुत्र एनोश के समय लोगों में परमेश्वर के प्रति पुनः लगाव दिखायी दिया। लोगों ने परमेश्वर की महत्ता एवं आवश्यकता को महसूस किया और हाबिल की भाँति दया व सहायता पाने के लिए परमेश्वर से प्रार्थना करने लगे। हम भी प्रभु परमेश्वर पर आशा-भरोसा रखते हुए अपनी आवश्यकता के समय उससे प्रार्थना कर सकते हैं। प्रभु पर विश्वास करने से पूर्व शायद आप स्वयं पर, अपने दोस्तों पर, माता-पिता पर, राशिफल पर या फिर अन्य किसी आत्मा पर आशा-भरोसा करते थे। अपनी आवश्यकताओं के लिए संभवतः आप इन्हीं शक्तियों या युक्तियों पर भरोसा रखते थे। परन्तु अब आप सच्चे प्रभु परमेश्वर की संतान हो गये हैं, और यह जानते हैं कि अपने आप पर

अथवा अन्य किसी शक्ति या युक्ति पर आशा-भरोसा रखकर (आध्यात्मिक) जीवन बिताना अन्ततः व्यर्थ साबित होता है। अब आप प्रभु परमेश्वर पर भरोसा रखकर आत्मिक जीवन व्यतीत कर सकते हैं। वही आपका स्वर्गिक पिता है। अपनी समस्त आवश्यकताओं के लिए हमें अपने स्वर्गिक पिता पर ही आश्रित रहना सीखना है। यह कुछ उसी प्रकार है जैसे कि बच्चे अपनी आवश्यकता के समय अपने पिता की ओर दृष्टि लगाते हैं। भूख लगने पर बच्चे किससे कहते हैं? अपनी अन्य किसी जरूरत के समय आपका बच्चा किसके पास जाता है? यदि उसे एक नयी शर्ट की ज़रूरत है तो वह किसके पास जाता है? तबियत खराब होने पर कोई बच्चा अपने माता-पिता के पास क्यों जाता है? क्योंकि बच्चे को पूर्ण भरोसा है कि उसके माता-पिता उसकी मदद करेंगे, देखभाल करेंगे। उसे यह निश्चयता है कि उसके माता-पिता उससे प्रेम रखते हैं और वह उनका बच्चा है। मसीह आपके बदले मरा, और उसके साथ (आपका पुराना मनुष्यत्व यानि) आप भी मर चुके हैं (रोमि0 6:6)। अब आप परमेश्वर की संतान हैं। अतः अब आप अपनी समस्त आवश्यकताओं को अपने स्वर्गिक पिता परमेश्वर के समक्ष पेश कर सकते हैं।

पवित्रशास्त्र बाइबॅल के अनुसार एनोश की मृत्यु के बाद, बहुत साल तक लोगों ने प्रभु को याद नहीं किया। परन्तु आगे चलकर, पवित्रशास्त्र एक ऐसे व्यक्ति का जिक्र करता है जो ''परमेश्वर के साथ-साथ चलता रहा'' और जिसे प्रभु परमेश्वर द्वारा जीवित दशा में ही स्वर्ग में उठा लिया गया। उसका नाम ''हनोक'' था। हनोक की तरह परमेश्वर अपनी सभी सन्तानों को स्वर्ग ले जाएगा। कहने का मतलब यह है कि यदि हमारी मृत्यु से पूर्व मसीह का पुनरागमन होता है, तो हम भी जीवित दशा में ही स्वर्ग में उठा लिए जाएंगे। बाइबॅल के अध्ययन से मसीह के पुनः आगमन के बारे में तथा उसके विश्वासियों के स्वर्ग में उठा लिए जाने के बारे में और बहुत सी सच्चाईयों की जानकारी मिलती है।

शेत के समय लोगों ने कुछ समय तक तो परमेश्वर का अनुसरण किया, लेकिन बाद में फिर प्रभु से दूर, मनमानी जीवन व्यतीत करने लगे। तब लोगों की दुष्टता के कारण परमेश्वर ने उन्हें नष्ट करने की चेतावनी दी। बेशक, वह उनसे अत्यन्त क्रोधित था, फिर भी उसने उन पर अनुग्रह किया और उन्हें मन-फिराव करने की चेतावनी दिया। ऐसा नहीं करने पर उनके ऊपर भेजे जाने वाले न्याय-दण्ड के प्रति भी आगाह किया। मन-परिवर्तन के साथ प्रभु पर विश्वास व भरोसा करने और उसकी ओर फिरने की उनकी आवश्यकता को पवित्र आत्मा निरंतर दर्शाता रहा। उस समय के लोगों को परमेश्वर का आत्मा किस प्रकार चेतावनी दिया? परमेश्वर ने अपने दास नूह को इस्तेमाल करके उस समय के लोगों को दोषी ठहराया। आजकल के बारे में क्या कहा जा सकता है? क्या नूह के जमाने की तरह आज भी लोगों को परमेश्वर अपनी चेतावनी देता है? हाँ, पवित्र आत्मा आज भी लोगों से बातचीत करता है, चेतावनी देता व कायल करता है। पवित्र आत्मा ने आपको सत्य की शिक्षा व ज्ञान-पहचान कैसे दिया? संभवतः किसी को भेजकर आपको सत्य शिक्षा सुनने का अवसर प्रदान किया, और लिखित पवित्र वचन को आप तक पहुँचाया। आजकल प्रभु परमेश्वर किन लोगों का इस्तेमाल करके अविश्वासियों को चेतावनी देना चाहता है? नूह की तरह अपने प्रत्येक विश्वासी को इस्तेमाल करके, प्रभु परमेश्वर अविश्वासियों को चितौनी देना चाहता है।

अन्य सब लोगों की तरह नूह भी जन्म से पापी था। अपनी ओर से कुछ करके परमेश्वर (के न्याय की मांग) को सन्तुष्ट करने में वह भी अक्षम था। परन्तु प्रतिज्ञात् उद्धारकर्ता (अर्थात् मसीह) सम्बन्धी परमेश्वर के वायदे पर नूह को विश्वास था। वह परमेश्वर की बात पर भरोसा करता था। हाँ, नूह भी अन्य सब पापियों के समान दण्ड-योग्य था, किन्तु परमेश्वर अपने अनुग्रह से नूह एवं उसके घराने को बचाया। रोचक है कि नूह की इस कहानी से सम्बद्ध उत्पत्ति 6:8 में बाइबॅल में पहली बार ''अनुग्रह'' (Grace या कृपा-दृष्टि) शब्द का प्रयोग हुआ है। नूह एक धर्मी जन था। पवित्रशास्त्र में यह बात बारम्बार कही गई है

कि ''धर्मी जन विश्वास से जीवित रहेगा''। ''विश्वास'' ही मसीही जीवन-आचरण की कुंजी है।

क्या हममें से कोई जन परमेश्वर के न्याय-दण्ड से बचने के लायक है? क्या हमने ऐसा कोई कार्य किया है जिसके कारण हमारे प्रति प्रेम व दया दर्शाने के लिए परमेश्वर को मजबूर होना है? नहीं! नूह की तरह हममें से प्रत्येक जन केवल परमेश्वर के अनुग्रह से ही बचाया गया है। हम भी अनन्त दण्ड के योग्य थे। लेकिन जैसे नूह के लिए परमेश्वर ने एक उपाय किया, उसी तरह उसने हमारे बचने के लिए भी एक उपाय किया है – यीशु मसीह के माध्यम से। नूह को परमेश्वर बचाना चाहता था। इसलिए उसने नूह को एक जलयान बनाने की आज्ञा दी। क्या नूह को उस जहाज को बनाने के तौर-तरीके का ज्ञान था? नहीं! नूह ने परमेश्वर तथा उसके वचन पर विश्वास व भरोसा करते हुए, परमेश्वर के बताए तौर-तरीके से ही उस जलयान को तैयार किया। स्मरण रहे कि परमेश्वर पर विश्वास करने हेतु उसके निर्देश और उसके वचन सदैव सुस्पष्ट होते हैं। नूह की भाँति हम भी परमेश्वर की बात का विश्वास करते हुए उसका अनुसरण कर सकते हैं। जैसे नूह को बचाने के लिए उस जलयान को बनाने का निर्णय परमेश्वर का था, उसी प्रकार मसीह यीशु के जीवन द्वारा हमें और आप को बचाने का निर्णय भी प्रभु परमेश्वर का है।

नूह तथा सारे पशु-पक्षी उस जलयान में कैसे प्रवेश किए? उन सब के प्रवेश करने के बाद अन्ततः उस जहाज के फाटक को किसने बन्द किया? क्यों प्रभु परमेश्वर ने उस फाटक को बन्द किया? प्रभु परमेश्वर ने उस फाटक को इसलिए बन्द किया ताकि जलयान के भीतर के लोग बच जाएं और बाहर के लोग उसमें प्रवेश न कर सकें। क्या उस जहाज के भीतर कोई मरा? नहीं! हम उद्धार में कैसे प्रवेश करते हैं? मसीह के द्वारा। जैसे परमेश्वर ने उस जलयान का फाटक बन्द कर दिया कि उसके भीतर के लोग बचे रहें, उसी प्रकार उसने हमें ''मसीह में'' बन्द कर दिया है जिससे कि हम सदा सर्वदा बचे रहें।

अब हमें मृत्यु अथवा पाप की शक्ति से भयभीत होने की ज़रूरत नहीं है, क्योंकि हम मरने पर भी प्रभु परमेश्वर के पास होंगे। परमेश्वर का धन्यवाद हो कि अब मसीह के विश्वासियों को मृत्यु के बाद नरक में जाकर दण्ड नहीं सहना होगा। नूह की जहाज से बाहर के कितने लोग नष्ट किए गये? सभी लोग। अपने उद्धार के लिए मसीह पर विश्वास नहीं करने वालों में से कितने लोग ईश्वरीय दण्ड के भागीदार होंगे? सब। प्रभु परमेश्वर, नूह तथा उस जहाज के सब प्राणियों को बचाना नहीं भूला। जलप्रलय से उन सबको बचाने के बारे में परमेश्वर अपनी वाचा को पूरा किया। इसके बाद परमेश्वर ने यह वायदा किया कि पृथ्वी को पुनः इस प्रकार के जलप्रलय से नष्ट नहीं करेगा, और इस वायदे के प्रमाणस्वरूप उसने ''बादल में धनुष'' रूपी चिन्ह दिया है।

विचारणीय बाइबॅल-पद

उत्पत्ति 4:1 ,2 ; इफि0 2:3 ; रोमि0 8:35-37 ; उत्पत्ति 4:3 ,4 ; इब्रा0 11:4 ; उत्पत्ति 4:5-7 ;उत्पत्ति 4:16 ;उत्पत्ति 4:25 ,26 ; उत्पत्ति 5:22-24 ; उत्पत्ति 6:5 ,6 ,7 ; उत्पत्ति 6:3 ; इब्रा0 11:7 ,11 ; उत्पत्ति 6:8 ,9 ; रोमि0 1:17 ; इफि0 2:8 ; उत्पत्ति 6:13-16 ,22 ; उत्पत्ति 7:1 ,16 ,17 ,23 ; उत्पत्ति 8:1-4 ,14-19 ; उत्पत्ति 9:12 ,13।

4

अब्राहम और लूत

क्या शेम, हाम और येपेत के वंशज प्रभु का अनुसरण किए? उन के कुछ ही वंशज हाबिल, शेत और नूह की तरह प्रभु के अनुयायी हुए। अधिकतर लोगों ने प्रभु का अनुसरण नहीं किया। आगे चलकर एक समय ऐसा आया जब कि वे एक बहुत ऊँची मीनार बनाने लगे। क्यों? वे सब स्वार्थी अर्थात् स्व-केन्द्रित लोग थे और सिर्फ अपने नाम, काम व शक्ति के दिखावे में रुचि रखते थे। वे लोग उस गगनचुम्बी मीनार को बनाने का प्रयास तो किए, किन्तु परमेश्वर ने उनकी इस योजना को पूरा नहीं होने दिया। परमेश्वर ही सबसे अधिक सामर्थी एवं महान है। इसलिए सब बातों व कामों में अन्ततः उसी का निर्णय सफल होता है, और उसी का उद्देश्य सदैव पूर्ण होता है। मनुष्य की सारी योजनाओं के ऊपर प्रभु परमेश्वर ही सर्वसत्ताधारी है। परमेश्वर के प्रति वे अविश्वासी एवं विद्रोही लोग, पृथ्वी पर तितर-बितर होने के बजाय एक गगनचुम्बी मीनार व नगर बनाकर, स्वयं को एक ही जगह बसाने में लग गये। अतः परमेश्वर ने उनके लिए वही होने दिया जिसे वे नहीं चाहते थे। अर्थात् उन्हें पृथ्वी पर तितर-बितर होना पड़ा।

क्या इन अवज्ञाकारियों व अविश्वासियों द्वारा मीनार बनाने के कुप्रयास के कारण (चुने हुए वंश से) प्रतिज्ञात् उद्धारकर्ता भेजने की अपनी योजना को परमेश्वर त्याग दिया? नहीं! परमेश्वर अपनी योजना नहीं त्यागा। परमेश्वर के काम को कोई रोक नहीं सकता और न ही परमेश्वर किसी के दबाव में अपनी योजना बदलता है। परमेश्वर के प्रति विद्रोह करके उससे कोई जीत नहीं सकता। यद्यपि वे परमेश्वर को भूल बैठे थे, किन्तु परमेश्वर उन्हें नहीं भूला था। इन्सान के पापीपन के बावजूद, परमेश्वर ने उस पर अनुग्रह किया। प्रभु परमेश्वर अब्राहम को बुलाया और उसे अपना देश छोड़कर एक अन्य देश जाने का आदेश

दिया। परमेश्वर ने उससे यह भी कहा कि अब्राहम के द्वारा वह एक नया राष्ट्र तैयार करेगा; और संसार के लिए प्रतिज्ञात् उद्धारकर्ता भी अब्राहम के वंश का होगा। अब्राहम से परमेश्वर ने यह वायदा किया कि उसके वंशज इतना बढ़ेंगे कि एक महान राष्ट्र बन जाएंगे। उस *महान* राष्ट्र का नाम ''इस्राएल'' है। प्रभु परमेश्वर ने अब्राहम की संरक्षा एवं समृद्धि का भी वायदा किया कि उसके द्वारा अन्य बहुत से लोग आशीषित होंगे। प्रभु परमेश्वर ने उससे यह भी कहा कि जो अब्राहम के साथ खराब व्यवहार करेंगे उन्हें वह श्रापित बनाएगा, और जो लोग उसके साथ भला व्यवहार करेंगे उन्हें वह आशीषित करेगा। प्रभु परमेश्वर ने यह भी वायदा किया कि वह प्रतिज्ञात् उद्धारकर्ता भी अब्राहम के वंश में ही जन्म लेगा, जिसके द्वारा सारा संसार आशीषित होगा। अब अब्राहम के उसी वंशज ''मसीह'' के द्वारा संसार की सभी जातियों के लिए आशीष उपलब्ध है। ''यीशु'' ही अब्राहम का वह वंशज है, जिसमें परमेश्वर के सारे वायदे पूरा हुए हैं। मसीह यीशु के द्वारा सब जातियों के लिए ईश्वरीय उद्धार उपलब्ध है। परमेश्वर के प्रेम, दया व सहायता को पाने का अन्य कोई ईश्वरीय मार्ग नहीं है।

एक अज्ञात स्थान की ओर जाने के लिए परमेश्वर की बुलाहट मिलने पर अब्राहम ने क्या किया? परमेश्वर के वचन पर ***विश्वास*** करके चल दिया। उस समय अब्राहम और उसकी पत्नी सारा के कोई सन्तान नहीं थी। फिर भी, भविष्य में असंख्य वंशज पैदा होने के बारे में परमेश्वर की बात (वायदे) पर उसने ***विश्वास*** किया। अब्राहम के साथ कनान देश जाने वालों में उसका एक भतीजा भी था। लूत नामक यह भतीजा, अब्राहम से अलग होने पर सदोम नामक दुष्टतापूर्ण नगरी के पास जाकर बसा। क्यों? हव्वा, कैन और बाबेल की मीनार बनाने वाले लोगों की तरह लूत भी स्व-केन्द्रित अर्थात् स्वार्थी था। बाद में लूत जब सदोम शहर के और निकट बस गया, तब अन्य देशों के चार राजाओं ने लूत के चहुँओर बसे पाँच राजाओं पर हमला करके सब कुछ अपने कब्जे में कर लिया। यहाँ तक कि लूत और उसकी धन सम्पत्ति भी ले लिया। तब कोई जन भाग कर यह सब अब्राहम को बताया। अब्राहम

को प्रभु परमेश्वर ने इस्तेमाल किया, क्योंकि वह परमेश्वर पर आशा-भरोसा व विश्वास रखकर जीवन व्यतीत करने वाला ईश्वर-भक्त था। इस प्रकार अब्राहम द्वारा प्रभु परमेश्वर ने लूत पर दया-दृष्टि की, और उस पर अपना अनुग्रह प्रकट किया। जब लूत पर अत्याचार करने वाले उन चारों राजाओं को पराजित करके अब्राहम वापस आ रहा था, तब मार्ग में **मलिकिसिदक** नामक एक व्यक्ति से उसकी भेंट हुई। पवित्रशास्त्र से हमें यह ज्ञात होता है कि वह ''शालेम'' का राजा था, और बाइबॅल में **याजक** के रूप में सबसे पहले इसी व्यक्ति का नाम आया है।

परमेश्वर द्वारा अब्राहम के लिए पुत्र का वायदा करने के बाद, बहुत वर्ष बीत चुके थे। उसकी उम्र बुढ़ापे की ओर ढल रही थी और संभवतः पुत्र सम्बन्धी ईश्वरीय वायदे के पूरा होने में देरी के बारे में उसके मन में विभिन्न प्रकार के विचार आने लगे थे। उस समय की परम्परा के अनुसार अब्राहम के कोई पुत्र नहीं होने पर, उसकी समस्त धन-सम्पत्ति उसके किसी नौकर को मिलती। परमेश्वर अपने दास अब्राहम की चिन्ता से सुपरिचित था और इस सम्बन्ध में उससे बातचीत भी की। अब्राहम को एक पुत्र देने की अपनी प्रतिज्ञा को प्रभु परमेश्वर भूला नहीं था। परमेश्वर विश्वासयोग्य व सच्चा है। वह जो कुछ कहता है उसे अवश्य पूरा करता है। उसने अपनी प्रतिज्ञा को अब्राहम से पुनः दोहराया। अब्राहम ने प्रभु परमेश्वर की बात पर *विश्वास* किया। अपनी तथा अपनी पत्नी सारा के बुढ़ापे की ओर ढलती उम्र के बावजूद, उसने परमेश्वर के वायदे पर भरोसा रखा कि **वह** उन्हें पुत्र प्रदान करेगा। इस प्रकार अब्राहम ने परमेश्वर की इस बात पर *विश्वास* किया कि उसके वंश से ही संसार का उद्धारकर्ता पैदा होगा। हाँ, अब्राहम यह जानता था कि वह भी एक पापी इन्सान है, परन्तु उसने प्रतिज्ञात् उद्धारकर्ता के बारे में परमेश्वर की प्रतिज्ञा पर आशा-भरोसा रखा। प्रभु परमेश्वर ने अब्राहम के पाप को क्षमा किया और उसे ग्रहण किया। समय बीतता गया और बाद में अब्राहम के साथ वही हुआ जैसा कि प्रभु परमेश्वर ने उससे वायदा किया था। प्रतिज्ञात् उद्धारकर्ता के द्वारा

समस्त संसार को आशीषित होना था। इस सम्बन्ध में हम अपने बारे में विचार करें! क्या प्रतिज्ञात् उद्धारकर्ता के कारण हम भी आशीषित हैं? अपने उद्धारकर्ता के रूप में मसीह पर विश्वास करने से (अब्राहम के समान) हमें भी प्रभु परमेश्वर ने ग्रहण कर लिया है।

इन सब घटनाओं के मध्य ईश्वरीय वायदों के बारे में अब्राहम की पत्नी सारा का धैर्य डगमगाने लगा, और उसने हाजिरा नामक अपनी एक दासी को अब्राहम के लिए दूसरी पत्नी के रूप में पेश करके झटपट एक सन्तान पाने की युक्ति बनायी। ऐसी युक्ति को अपनाने के द्वारा अब्राहम और सारा, ईश्वरीय प्रबन्ध का परित्याग करके, अपनी युक्ति का सहारा ले रहे थे। सारा का यह स्व-प्रयास परमेश्वर के समक्ष ग्रहणयोग्य नहीं था। प्रभु परमेश्वर तो उस पर विश्वास रखने वालों से ही प्रसन्न होता है। यह तो सारा द्वारा बनायी गई योजना थी, ईश्वरीय उपाय नहीं। गलती से अब्राहम भी इसमें शामिल हो गया। सारा और अब्राहम के इस अविश्वासपूर्ण स्व-प्रयास ने समस्याएं एवं समस्याएं ही पैदा की। सबसे पहली समस्या की शिकार सारा व हाजिरा हुईं जिनमें ईर्ष्या-द्वेष व झगड़ा बढ़ने लगा। हाजिरा से पैदा हुआ इश्माएल नामक पुत्र, सारा के अविश्वास व स्वप्रयास का प्रतिफल था। परमेश्वर की योजना हेतु यह पुत्र स्वीकार्य नहीं था, क्योंकि वह तो परमेश्वर के प्रति मनुष्य के अविश्वास की सन्तान था। आदम-हव्वा द्वारा अंजीर के पत्तों से वस्त्र बनाकर अपनी नग्नता ढकने, कैन की ओर से अस्वीकार्य भेंट चढ़ाने और बाबेल की मीनार बनाने वालों का कर्म भी इसी प्रकार का व्यर्थ स्व-प्रयास था। हाजिरा को अपनी पत्नी बनाने के बाद लगभग तेरह वर्ष तक अब्राहम को परमेश्वर की ओर से कोई वचन (सन्देश) प्राप्त नहीं हुआ। कई वर्ष बाद उचित समय पर अनुग्रहकारी परमेश्वर ने अब्राहम से पुनः बातचीत की। तब परमेश्वर ने अब्राहम के वंशजों अर्थात् यहूदी लोगों के लिए अपनी वाचा दी। इसके अलावा, अब्राहम के वंशजों के शरीर में एक चिन्ह के बारे में भी संदेश दिया गया। यह वाचा और चिन्ह अब्राहम के वंशजों अर्थात् इस्राएलियों के लिए ही थे, मसीही विश्वासियों के लिए नहीं।

प्रभु परमेश्वर ने बड़ी स्पष्टता से वायदा किया था कि अब्राहम की पत्नी सारा से प्रतिज्ञानुसार जो पुत्र पैदा होगा, आगे चलकर उसी के वंश से संसार के लिए प्रतिज्ञात् मुक्तिदाता पैदा होगा। हाँ, सारा बूढ़ी थी। उस उम्र में संतान उत्पन्न करना असम्भव था। किन्तु परमेश्वर का वायदा था कि अब्राहम के लिए प्रतिज्ञात् पुत्र सारा से ही पैदा होगा। परमेश्वर के लिए कुछ भी असम्भव नहीं। अतः परमेश्वर ने पुनः कहा कि सारा के एक पुत्र पैदा होगा – ईश्वरीय योजना के अनुसार, मनुष्य के स्व-प्रयास के अनुसार नहीं। हाँ, अब्राहम तो अपनी दासी से उत्पन्न बेटे इश्माएल से प्रेम करता था। उसकी इच्छा थी कि परमेश्वर उसे ही आशीषित करे और उसी के वंशजों के द्वारा प्रतिज्ञात् मुक्तिदाता भेजे। परमेश्वर ने ऐसा नहीं होने दिया। बेशक, उसने इश्माएल को भी आशिष देने का वायदा किया; लेकिन उस रूप में नहीं जैसा कि सारा से पैदा होने वाले प्रतिज्ञात् पुत्र को विशिष्ट आशिष व सुअवसर मिलना था।

विचारणीय बाइबॅल-पद

उत्पत्ति 11:1-4 ,5-9 ; नीति0 16:9 ; भ0सं0 115:3 ; भ0सं0 135:6 ; उत्पत्ति 12:1-3 ; प्रेरि0 4:12 ; उत्पत्ति 12:4-5 ; उत्पत्ति 13:7-13 ; उत्पत्ति 14:11 ,12 ,13-16 ,18-20 ; उत्पत्ति 15:1-6 ; इब्रा0 11:4 ,6 ; उत्पत्ति 17:1-8 ,9-11 ; मत्ती 19:23 ; उत्पत्ति 17:18-21।

5

अब्राहम की परीक्षा

लूत को प्रभु परमेश्वर ने अपनी दया से बचा लिया और सदोम-अमोरा शहरों को नष्ट कर दिया। परमेश्वर के स्वर्गदूतों ने लूत को सदोम नगर के दुष्टों से बचाया। परमेश्वर ने अपने स्वर्गदूत भेजकर लूत को क्यों बचाया? यद्यपि लूत भी अन्य लोगों की तरह पापी जन्मा था, किन्तु वह प्रतिज्ञात् उद्धारकर्ता के आने पर मिलने वाले उद्धार में आशा-भरोसा रखे था। परमेश्वर द्वारा भेजे गये दूतों ने लूत के घर में रात बिताई, और उस शहर के दुष्ट लोगों ने उन्हें नुकसान पहुंचाने का असफल दुस्साहस किया। उत्पत्ति की पुस्तक में इस घटना का स्पष्ट विवरण पाया जाता है। उन स्वर्गदूतों ने कहा कि उस शहर को नष्ट करने से पहले लूत को वहाँ से निकल जाना है। अन्ततः लूत एवं उसके परिवार को उन स्वर्गदूतों ने सदोम से जबरन निकाला। यह मनुष्य के लिए परमेश्वर द्वारा किए गये अनुग्रहपूर्ण कार्य का एक अद्‌भुत उदाहरण है। चूंकि भविष्य में भेजे जाने वाले प्रतिज्ञात् उद्धारकर्ता के बारे में परमेश्वर के वायदे पर लूत विश्वास रखता था और परमेश्वर उसे पूर्ण क्षमा प्रदान किए था, इसलिए जब तक उस शहर में लूत था, तब तक परमेश्वर ने उसे नष्ट नहीं किया।

प्रभु यीशु मसीह के माध्यम से हम भी परमेश्वर की क्रोधाग्नि से बच गये हैं। जिस ईश्वरीय क्रोध व दण्ड को हमें सहना था, उसे हमारे बदले यीशु ने सहन किया। सदोम-अमोरा की तरह प्रभु परमेश्वर अविश्वासियों को दोषी (दण्डनीय) ठहरा चुका है। जो मसीह (में प्राप्त उद्धार) को ग्रहण नहीं करते वे अनन्त दण्ड के भागी होंगे। वास्तव में अन्य लोगों की तरह लूत को भी मृत्यु-दण्ड मिलना था, किन्तु परमेश्वर ने अपने अनुग्रह से लूत को बचा लिया। हम भी नरक-योग्य हैं, परन्तु लूत की भाँति परमेश्वर ने अपने अनुग्रह से हमें बचाया है और अपना

बना लिया है। जब प्रभु यीशु अपने लोगों के लिए इस पृथ्वी पर पुनः आएगा, तब सभी अविश्वासी लोगों का न्याय होगा और नरक-दण्ड मिलेगा। उस समय हमारी क्या दशा होगी? क्या प्रभु हमें भूल जाएगा? नहीं, कभी नहीं। मसीह हमारा न्याय-दण्ड सहन कर चुका है। अब हम प्रभु के घराने के हो गये हैं। मसीह के सनातन लहू द्वारा हमारे पाप-दण्ड का मूल्य चुकता कर दिया गया है। अतः अब हमें उस दण्ड के लिए दण्डित नहीं किया जाएगा।

सदोम से निकाल लिए जाने पर लूत की पत्नी पीछे मुड़कर सदोम की ओर देखने लगी। उन दूतों ने ऐसा नहीं करने के लिए पहले से ही आगाह कर रखा था। तब परमेश्वर ने उसे नमक का खम्भा बना दिया। क्यों? उसके अविश्वास के कारण।

सदोम और अमोरा के विनाश तक अब्राहम एक पहाड़ी पर बसा था, जहाँ से तराई का क्षेत्र दिखाई देता था। इन दोनों शहरों के विनाश के बाद अब्राहम और दक्षिण की ओर अर्थात् प्रतिज्ञात् देश के मैदानी क्षेत्र में रहने लगा। अब्राहम और सारा लगभग सौ वर्ष की उम्र के होने वाले थे। क्या उनके लिए परमेश्वर ने जिस पुत्र की प्रतिज्ञा की थी वह पैदा हुआ? हाँ। ''इसहाक'' नामक पुत्र पैदा हुआ, और इस प्रकार ईश्वरीय वायदा पूर्ण हुआ। परमेश्वर पूर्णरूपेण विश्वसनीय है।

प्रतिज्ञात् पुत्र इसहाक के पैदा होने तक हाजिरा एवं इश्माएल, अब्राहम एवं सारा के साथ ही रहते थे। लेकिन कुछ ही समय बाद समस्याएं खड़ी होने लगीं, और अन्ततः हाजिरा एवं इश्माएल को अब्राहम ने अपने पास से हटा दिया। प्रभु परमेश्वर ने इन दोनों को वहाँ से हटाने की अब्राहम को अनुमति दी। परमेश्वर की प्रतिज्ञा के अनुसार उत्पन्न संतान इसहाक ही था और उसी को अब्राहम के लिए परमेश्वर से प्राप्त सभी वाचाओं का वारिस होना था। प्रतिज्ञात् उद्धारकर्ता (मसीह) को भी उसी के वंश से पैदा होना था। इसहाक और इश्माएल एक ही साथ नहीं रह सकते थे। इश्माएल, मनुष्य के कर्म-प्रयास द्वारा परमेश्वर को प्रसन्न करने की कोशिश (शारीरिकता में मनुष्य द्वारा

ईश्वरीय काम करने) का एक प्रतीक है। इसहाक परमेश्वर के अनुग्रहपूर्ण उपाय का एक प्रमुख उदाहरण (प्रतीक) है। यह दोनों एक साथ नहीं चल सकते। परमेश्वर किसी विश्वासी (के जीवन में अपने अनुग्रह) द्वारा काम करे और साथ-ही-साथ वह विश्वासी अपने स्व-प्रयास (व्यवस्था) द्वारा परमेश्वर का काम करने में लगा रहे, यह (दोनों बातें) संभव नहीं है। रोमियो की पत्री के ग्यारहवें अध्याय के छठवें पद के अनुसार व्यवस्था और अनुग्रह की मिलावट नहीं की जा सकती।

इसहाक से अब्राहम बहुत प्रेम करता था। उसके पैदा होने के लिए उसने बहुत प्रतीक्षा की थी। परमेश्वर द्वारा अब्राहम को दी गई सारी प्रतिज्ञाएं इसहाक के माध्यम से ही पूरी होनी थीं। एक दिन एक ऐसी घटना हुई जो अब्राहम के विश्वास की सच्ची परीक्षा थी। क्या अब्राहम सचमुच परमेश्वर पर विश्वास करता था? इस बात से भी ज्यादा महत्वपूर्ण बात उस परमेश्वर की विश्वसनीयता थी जिस पर अब्राहम का भरोसा था। ध्यान रहे कि अब्राहम के *विश्वास* को धार्मिकता गिना गया था। अब्राहम जानता था कि प्रभु परमेश्वर झूठ नहीं बोलता, वह जानता था कि परमेश्वर अपने वायदों के बारे में बदलता नहीं। अब्राहम अपने प्रभु परमेश्वर को जानता था और उस पर भरोसा रखता था। स्मरण रहे कि हम प्रभु को जितनी हद तक नहीं जानते उतना अधिक अन्य चीजों पर भरोसा करेंगे। अपने विश्वासियों से प्रभु परमेश्वर सबसे अधिक यही चाहता है कि वे उस पर आशा-भरोसा व विश्वास रखें।

क्या अब्राहम ने सचमुच इसहाक को बलि कर दिया (मार डाला)? नहीं। उसके स्थान पर बलिदान करने के लिए परमेश्वर ने एक मेढ़ा प्रदान किया। जैसे उस परमेश्वर-प्रदत्त मेढ़े के बलिदान द्वारा इसहाक को मृत्यु से छुटकारा मिला, उसी प्रकार हमारे बदले मसीह की मृत्यु के द्वारा हमें अनन्त मृत्यु से छुटकारा मिला है। प्रभु यीशु मसीह पर विश्वास करने से पहले हम सब 'बलिदान-वेदी पर पड़े

इसहाक' जैसी अवस्था में थे : 'हाथ-पैर बाँध कर लिटाए हुए और मारने वाले के हाथ में हमारी ओर वार करने के लिए तैयार छूरी'। हम पापी थे और पाप-दण्ड पाने के लिए हमारा मरना सुनिश्चित था। परन्तु जैसे इसहाक को बचाने के लिए परमेश्वर ने उसके बदले बलि होने के लिए (एक मेढ़े का) उपाय किया, उसी प्रकार उसने हमारे बदले मरने के लिए एक ***मेमने*** का उपाय किया। परमेश्वर पर इसहाक का विश्वास व भरोसा ही उसे (मृत्यु से) बचाया, और विश्वास ने ही अब्राहम को इसहाक को मार डालने से रोका। जैसा उनके साथ हुआ वैसे हमारे साथ भी – परमेश्वर पर हमारा विश्वास व भरोसा ही हमें बचाता है, और इस सम्बन्ध में प्रमुख सत्य यह है कि हमारे पापों के बदले उसने मसीह को मरने (बलि होने) भेजा।

इसहाक के स्थान पर वह मेढ़ा भेंट चढ़ाया गया, क्योंकि वह निर्दोष मेढ़ा था। हमारे बदले यीशु मसीह बलि चढ़ाया गया, क्योंकि वह पूर्णरूपेण सिद्ध अर्थात् निर्दोष था। वह पवित्र आत्मा द्वारा गर्भधारण किया, एक कुंवारी से जन्म लिया, और निष्पाप पैदा हुआ। वह पिता परमेश्वर पर विश्वास रखा और उसी की इच्छा का पालन किया। उसने वही किया जो उसके पिता ने कहा। इस प्रकार पूर्णरूपेण सिद्ध होने के कारण, वह हमारे पापों के दण्ड-मूल्य को चुकता कर सकता था। जैसे वह मेढ़ा इसहाक के बदले मरा, उसी प्रकार हमारे बदले **मसीह यीशु** मरा। उस मेढ़े के उपाय के लिए अब्राहम और इसहाक संभवतः जीवन भर परमेश्वर को धन्यवाद देते रहे। हमें भी प्रभु परमेश्वर का निरंतर धन्यवाद करना चाहिए कि उसने हमारे बदले यीशु को बलि होने (मरने) के लिए भेजा।

आगे चलकर, रिबका नामक कन्या से इसहाक की शादी हुई। इनके जुड़वा पुत्र पैदा हुए। क्या हम इनके नाम जानते हैं? ये जुड़वा पुत्र किस मायने में एक दूसरे से भिन थे? एसाव एक अविश्वासी व्यक्ति था। प्रतिज्ञात् उद्धारकर्ता सम्बन्धी ईश्वरीय वाचाएं एसाव की दृष्टि में महत्वपूर्ण नहीं थीं। याकूब यह समझता था कि वह भी एक

पापी है, और उसने प्रतिज्ञात् उद्धारकर्ता के आगमन के बारे में परमेश्वर के वायदे पर विश्वास रखा। वह अपने घर से एक खास यात्रा पर क्यों निकला? उस यात्रा के दौरान प्रभु परमेश्वर उससे किस प्रकार बात किया? याकूब अपने स्वप्न में क्या देखा? मनुष्य और परमेश्वर के बीच केवल एक ही मध्यस्थ है, अर्थात् प्रभु यीशु मसीह। याकूब ने अपने दर्शन में जिस सीढ़ी को देखा, वह सीढ़ी मसीह यीशु ही है। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि पाप तो मनुष्य को परमेश्वर से अलग कर देता है। यह अलगाव एक विशाल खाई समान होता है। अपनी मृत्यु के द्वारा यीशु ने मानव एवं परमेश्वर के मध्य की इस विशाल खाई को (सेतु-समान) पाट दिया। हमारे बदले मसीह की प्रतिस्थापन्न मृत्यु के कारण, हम परमेश्वर के समीप आ सकते हैं। क्या प्रभु परमेश्वर अपने वायदे के अनुसार याकूब को उसके पिता व पितामह के देश वापस ले गया? हाँ। याकूब को प्रभु परमेश्वर ने क्या नया नाम दिया? इस्राएल। याकूब के कुल कितने पुत्र थे? बारह।

विचारणीय बाइबॅल-पद

उत्पत्ति 19:4-11 ,15-17 ,24 ,25 ,26 ; उत्पत्ति 21:1-8 ; नीति0 3:5-6 ; उत्पत्ति 21:8-13 ; गला0 4:22-23 ; रोमि0 11:6 ; उत्पत्ति 22:1 ,2 ,3 ; उत्पत्ति 15:6 ; इब्रा0 11:6 ,17-19 ; उत्पत्ति 22:10-13 ; रोमि0 6:23 ; यूह0 5:30 ; उत्पत्ति 25:20 ,21 ,24-26 ; उत्पत्ति 28:10-11 ,12 ,13-15 ।

6

इस्राएल और मूसा

याकूब के बारह पुत्र थे। उनमें से यूसुफ को याकूब बहुत प्रेम करता था। इस कारण यूसुफ के भाई उससे ईर्ष्या करते थे और उसके प्रति बैर-भावना रखते थे। यूसुफ की तरह मसीह यीशु भी अपने जाति-भाइयों द्वारा त्यागा गया। यूसुफ के भाई उससे इतना बैर करते थे कि उन्होंने उसे कुछ इश्माएली व्यापारियों के हाथ बेंच डाला। मसीह यीशु को भी यहूदा इस्करियोती ने उसके बैरियों के हाथ चाँदी के तीस सिक्कों में बेच दिया था।

आगे चलकर, यूसुफ पर झूठा आरोप लगाकर उसे जेल में डाल दिया गया। परन्तु परमेश्वर यूसुफ को नहीं भूला और न ही उसे त्यागा। प्रभु परमेश्वर ने उसे आदर, महिमा एवं अधिकार के स्थान पर पहुँचाया। इसी प्रकार मसीह को भी झूठों के हाथ दुःख सहना पड़ा, किन्तु पिता परमेश्वर ने उसे महान महिमा एवं अधिकार के उच्च पद पर प्रतिष्ठित किया। यद्यपि यूसुफ के गुलामी में बेचे जाने के बाद, उसे झूठे आरोप में जेल भेज दिया गया, किन्तु एक आश्चर्यजनक घटना के द्वारा परमेश्वर उसे जेल से बाहर निकाल कर पद-प्रतिष्ठा एवं अधिकार प्रदान किया। अपनी अवस्था एवं नियति को बदलने में असमर्थ यूसुफ जब अपनी विवशता, अयोग्यता एवं लाचारी को पहचाना, तब परमेश्वर ने उसको उच्च पद-प्रतिष्ठा तक पहुँचाया। इसी प्रकार यीशु के शत्रुओं ने उसे कीलों से क्रूस पर जकड़ दिया और मरने पर उसे गाड़ दिया गया। परन्तु पिता परमेश्वर ने उसे मृतकों में से पुनः जीवित करके, उसे स्वर्ग एवं पृथ्वी का सारा अधिकार प्रदान किया। यूसुफ के जीवन पर ध्यान देने से यह ज्ञात होता है कि यद्यपि उसके अपने भाइयों ने उसे त्याग दिया, किन्तु मिस्री लोगों ने उसे स्वीकार किया। उन लोगों ने उसे इतना आदर-मान दिया, जैसे कि उसी ने उन्हें अकाल की मार

से बचाया हो। हाँ, यीशु को भी उसके अपनों ने अस्वीकार किया, किन्तु संसार के सब क्षेत्रों से अनगिनत लोगों ने उसे अपना उद्धारकर्ता स्वीकार किया है।

अब्राहम, इसहाक और याकूब की तरह यूसुफ ने प्रभु परमेश्वर के वायदों पर आशा-भरोसा रखा। अतः परमेश्वर उसके साथ रहा, और यूसुफ पर स्वयं को सामर्थी एवं विश्वसनीय परमेश्वर के रूप में प्रकट करता रहा। यूसुफ अपनी परिस्थितियों से चिंतित होने के बजाय परमेश्वर की ओर मन लगाए रहता था। परमेश्वर की बात पर विश्वास व भरोसा किए बगैर उसे कोई प्रसन्न नहीं कर सकता।

क्या यूसुफ के भाईयों और उसके पिता को यह ज्ञात था कि परमेश्वर उसे मिस्र में महान पद-प्रतिष्ठा प्रदान किया है? हाँ, समय पर उन्हें यह ज्ञात हुआ, और मिस्र के राजा की ओर से उन्हें मिस्र में आकर रहने का निमंत्रण भी मिला। वहाँ का राजा अकाल के दिनों में यूसुफ की प्रशासकीय बुद्धिमत्ता से बहुत प्रभावित होकर उससे बहुत खुश था, इसलिए यूसुफ एवं उसकी पीढ़ी मिस्र में सुख-चैन से रही। लेकिन यूसुफ तथा मिस्र के उस राजा की मृत्यु के बाद हालात बदल गये।

प्रभु परमेश्वर ने अब्राहम के वंशज इस्राएलियों की देखरेख किया। उन्हें मिस्र की गुलामी से छुड़ाने के लिए परमेश्वर ने किसे चुना? मूसा को। उस दुष्ट मिस्री राजा से, परमेश्वर ने मूसा की रक्षा की। इब्री बच्चों के विनाश के बारे में उस राजा की बुरी नीयत के बावजूद, मूसा के बचाव हेतु प्रभु परमेश्वर ने आश्चर्यपूर्ण उपाय किए। वही नदी उस बालक के बचाव का साधन बनी जिसमें उस बालक के विनाश की कुयोजना को कामयाब होना था। जिस माता की गोद से उसे छीना जाना था, उसी को उस बालक को दूध पिलाते रहने का सुअवसर मिला। इतना ही नहीं, बल्कि उसकी माता को अपने ही बच्चे को दूध पिलाने के लिए वेतन भी मिला। जो उस बच्चे का नामोनिशान मिटाने पर तुला था, वही उस बालक के लालन-पालन व एजूकेशन का

इन्तजाम किया। जैसे मिस्र का राजा इस्राएलियों के भावी अगुवा (मूसा) को मार डालने का प्रयास किया, उसी प्रकार राजा हेरोदस ने हमारे मुक्तिदाता यीशु को मार डालने की कोशिश की। जैसे मूसा की रक्षा की गई उसी तरह प्रभु परमेश्वर ने यीशु की भी रक्षा की। प्रभु परमेश्वर तो शैतान से बहुत अधिक महान है। प्रतिज्ञात् उद्धारकर्ता भेजकर हमें पाप की गुलामी से छुड़ाने का प्रबन्ध प्रभु परमेश्वर ने किया, और इस योजना को शैतान विफल नहीं कर सकता था।

वयस्क मूसा के प्रारम्भिक जीवन पर दृष्टि डालने से इस सच्चाई की पुनः पुष्टि होती है कि मनुष्य जब भी परमेश्वर से आगे कदम मारता है तो बिगाड़, गड़बड़ी और दुःख-दर्द को ही दावत देता है। अपनी शुरुआती गतिविधियों में ईश्वरीय दिशा-निर्देशों बगैर मूसा केवल अपनी बल-बुद्धि के सहारे काम कर रहा था (सारा व अब्राहम की युक्तियों की तरह)। इस्राएली लोगों को मिस्र की गुलामी से छुड़ाने में कोई मानवीय शक्ति सक्षम नहीं थी। केवल प्रभु परमेश्वर ही उन्हें छुड़ाने में समर्थ था। अतः कोई आश्चर्य नहीं कि अपने को *मिशनरी* बनाने वाला मूसा एक हत्यारा बन बैठा। मनुष्य का शारीरिकतापूर्ण कर्म-प्रयास सिर्फ ऊसर, निष्फल एवं दुःखदायी जीवन ही पैदा करता है। अतः मूसा को भागकर अगले चालीस वर्ष मिद्यान देश की मरुभूमि में व्यतीत करने पड़े। परमेश्वर हमें सदैव ऐसे स्थान एवं अवस्था में ले जाता है जहाँ हम उसके वचन पर भरोसा रखकर विश्वास के सहारे जीना और स्वप्रयास त्यागना सीखते हैं।

परमेश्वर का काम, परमेश्वर के तरीके से होता है और परमेश्वर के समय पर होता है। अतएव जब उचित समय आया तब प्रभु परमेश्वर ने मूसा को मिस्र वापस भेजा कि इस्राएलियों को उनकी गुलामी से छुड़ाए। मूसा चालीस साल तक मरुभूमि में रहा, और इसके बाद जलती हुई झाड़ी से प्रभु परमेश्वर उससे बात किया। तब उसे मिस्र जाने का आदेश मिला कि अपने लोगों को वहाँ से छुड़ाए। मूसा के द्वारा प्रभु परमेश्वर अपना कार्य किया। जैसे इस्राएलियों को मिस्र की

गुलामी से छुड़ाने के लिए मूसा द्वारा परमेश्वर अपनी योजना कार्यान्वित किया, उसी प्रकार परमेश्वर ने मानव जाति को पाप व शैतान की दासता से छुड़ाने के लिए मसीह यीशु को नियुक्त (अभिषिक्त) किया। यद्यपि यीशु को इस्राएलियों ने छुटकारा देने वाला मानने से इनकार किया, फिर भी, पाप से उद्धार पाने के लिए परमेश्वर की ओर से **वही** एकमात्र उपाय है।

जब ***जलती हुई झाड़ी*** में से परमेश्वर ने मूसा से बात किया तब मूसा ने परमेश्वर से एक खास प्रश्न किया। यह प्रश्न परमेश्वर के नाम के बारे में था। परमेश्वर ने क्या उत्तर दिया? उस उत्तर पर विशेष ध्यान दें। जब परमेश्वर स्वयं को ''मैं जो हूँ, सो हूँ'' कहता है तो वह अपने आप को स्वयं-भू कहता है – जिसका न तो कोई आदि है, न अन्त। वह सब प्राणियों एवं सब वस्तुओं से पृथक, आत्मनिर्भर व स्वतंत्र है और उसे अपने आस्तित्व हेतु किसी व्यक्ति या वस्तु की आवश्यकता नहीं है। यीशु मसीह जब पृथ्वी पर था तब उसने कहा ''...मैं हूँ।'' उसकी इस बात से इस्राएल के तत्कालीन मजहबी अगुवे अत्यधिक क्रोधित हुए, क्योंकि वे जानते थे कि इन शब्दों के द्वारा यीशु अपने-आप को परमेश्वर घोषित कर रहा है। उन मजहबी अगुवों को मूसा की बुलाहट सम्बन्धी उपर्युक्त विवरण का ज्ञान था। लेकिन उन्हें यह ज्ञान-समझ नहीं थी कि यीशु वास्तव में सच्चा ''मैं हूँ'' है, और मनुष्य का उद्धारकर्ता होने के लिए देहधारी परमेश्वर है।

मूसा के मिस्र वापस जाने पर क्या वहाँ के राजा ने मूसा द्वारा दिए गए ईश्वरीय सन्देश को माना? नहीं! जब उस राजा ने ईश्वरीय सन्देश को मानने से इन्कार कर दिया तो परमेश्वर ने क्या किया? प्रभु परमेश्वर ने मिस्र देश पर अनेक महामारियाँ भेजीं : *नील नदी के पानी का लहू में बदलाव, मेंढकों की महामारी, मच्छर जैसे कुटकियों की महामारी, फफोलों की महामारी, डाँसों की महामारी, घरेलू पशुओं पर महामारी, ओलों की महामारी, टिड्डियों की महामारी, घोर अन्धकार की महामारी, और अन्ततः मिस्रियों के पहिलौठों की मृत्यु* रूपी महामारी

भेजी। इन सब महामारियों के दौरान इस्राएलियों की क्या दशा थी? क्या इन महामारियों की मार इस्राएलियों को भी झेलनी पड़ी? नहीं! प्रभु परमेश्वर ने इस्राएलियों एवं मिस्रियों में भिन्नता दर्शायी। मिस्रियों पर यह न्याय-दण्ड उन लोगों के आत्मिक न्याय-दण्ड की एक तस्वीर है जो मसीह द्वारा प्राप्त उद्धार पर विश्वास नहीं करते। तो क्या हम भी, जो उसकी आध्यात्मिक संतान हो गये हैं, दण्डित होंगे? नहीं, कभी नहीं। नूह के समय के जलप्रलय से लोगों को नष्ट करने से पूर्व प्रभु परमेश्वर ने नूह को बचाया और उस जहाज के फाटक को स्वयं बन्द कर दिया। दुष्टतापूर्ण सदोम शहर को नष्ट करने से पूर्व, प्रभु परमेश्वर ने लूत को बचाया। मिस्र देश में उपर्युक्त महामारियों के समय उसने इस्राएलियों और मिस्रियों में सुस्पष्ट अन्तर दर्शाया। अर्थात् इस्राएलियों को मिस्रियों के साथ दुःख-दण्ड नहीं दिया। प्रभु यीशु के विश्वासीगण उसके जन हैं। प्रभु अपने लोगों को उस न्याय-दण्ड से बचाएगा, जो संसार के अविश्वासियों के लिए होगा। लेकिन क्या यह भिन्नता इसलिए है कि विश्वासी लोग अविश्वासियों से बेहतर हैं? क्या ऐसा इसलिए होगा, क्योंकि हम गिरजाघर और ईसाई धर्म-सभाओं में जाते हैं? नहीं! यह तो सिर्फ *परमेश्वर के अनुग्रह* के कारण है।

फसह : मिस्र के पहिलौठों की मृत्यु रूपी महामारी, अन्तिम महामारी थी। अपने पहिलौठों को बचाने हेतु इस्राएलियों को क्या करना ज़रूरी था? इस विवरण से संबंधित बाइबॅल पदों पर ध्यान दें कि इस परिस्थिति में भी परमेश्वर अपने लोगों को विश्वास-योग्य दिशा-निर्देश बगैर नहीं छोड़ा। उन्हें अपने पहिलौठों को बचाने हेतु निर्दिष्ट पशु चुनना था। बलिदान हेतु उन्हें एक मेमना चुनना था, जिससे कि उनके पहिलौठे न मरें। इसी प्रकार, हमारा मुक्तिदाता होने के लिए प्रभु यीशु चुना गया। हम भी दण्ड के योग्य थे। हमें हमारे पापों के दण्ड से बचाने के लिए पिता परमेश्वर ने प्रभु यीशु को चुना, जैसे कि अपने पहिलौठों को मरने से बचाने के लिए उस समय मिस्र में बसे प्रत्येक इस्राएली घराने ने एक मेमना चुना। यह मेमना कैसा होना था – निष्कलंक, निर्दोष। क्या इस्राएली लोग किसी भी रोगी या लंगड़े मेमने

को उस बलिदान के लिए चुन सकते थे? नहीं। मसीह यीशु निष्पाप पैदा हुआ और सिद्ध (निष्कलंक) जीवन व्यतीत किया। वह परमेश्वर के समक्ष ग्रहण-योग्य था। क्यों, हमारे लिए केवल वही बलि हो सकता था? क्योंकि केवल वही निर्दोष, निष्पाप व निष्कलंक था, और पूर्णरूपेण सिद्धता का जीवन बिताया। उन इस्राएलियों के लिए प्रभु परमेश्वर का निर्देश था कि वे एक वर्ष की उम्र का नर मेमना चुनें। एक वर्ष का मेमना मजबूत व हष्ट-पुष्ट होता है। मसीह यीशु भी एक पुरुष था, और अपनी उम्र की सर्वोत्तम एवं प्रौढ़ अवस्था में हमारे बदले मरा। उसने हमारे बदले मरने के लिए, एक मेमने की भांति, स्वयं को परमेश्वर के हाथ में सौंप दिया। वह तैंतीस वर्ष का पूर्णतः स्वस्थ पुरुष था। उन इस्राएलियों के लिए यह भी निर्देश था कि उस मेमने को चुनने के बाद उसे चार दिन तक रख कर देखें कि कहीं उसमें कोई रोग-दोष तो नहीं है। मसीह यीशु भी, उपयुक्त एवं स्वीकार्य भेंट-बलिदान होने के लिए, पिता परमेश्वर द्वारा देखा-समझा गया और उसकी दृष्टि में पूर्णतः स्वीकार्य था। प्रभु यीशु इस धरती पर तैंतीस वर्ष जीवन बिताया। उस अवधि में भी उसके जीवन-आचरण की प्रत्येक बात को पिता परमेश्वर ने देखा। पिता परमेश्वर की दृष्टि में यीशु मसीह हर मायने में ग्रहण-योग्य था।

इस्राएलियों द्वारा चुने गये मेमने का मारा जाना यानि उसका बलि किया जाना आवश्यक था। यदि इस्राएली लोग उन मेमनों को बलि नहीं करते तो, क्या परमेश्वर उन मेमनों को केवल देखने से ही संतुष्ट हो जाता? नहीं। पहिलौठों को बचाने के लिए उन मेमनों का बलि किया जाना एवं उनका लहू बहाया जाना अत्यावश्यक था। ''लहू बहाए बिना, क्षमा है ही नहीं।'' इसी प्रकार प्रभु यीशु का मरना परमावश्यक था। क्या मसीह का केवल सिद्धतापूर्ण आचरण एवं उदाहरण हमें हमारे पापों के दोष-दण्ड से छुटकारा देने के लिए पर्याप्त होता? यदि हमें बचाया जाना था, तो मसीह के लिए क्या करना जरूरी था? हमारे पापों के दण्ड-मूल्य के बदले उसे अपना लहू देना ज़रूरी था। उस मेमने के बलिदान के पश्चात् उसके लहू को

इस्राएलियों के प्रत्येक घर के दरवाजों व चौखटों पर लगाया जाना ज़रूरी था। इसी प्रकार जो लोग व्यक्तिगत तौर पर प्रभु यीशु के लहू पर भरोसा करते हैं, केवल वही बचाये गये हैं। क्या मसीह सब मनुष्यों के लिए मरा? क्या इसका मतलब यह हुआ कि सब मनुष्यों के सभी पाप क्षमा हो चुके हैं, चाहे वह उस पर विश्वास करें या न करें? इन बातों का अनुचित अर्थ लगाने से दूर रहना है। सच्चाई यह है कि केवल वही लोग उद्धार पाते हैं जो अपने पापीपन को स्वीकारते हैं, और मसीह यीशु को अपना उद्धारकर्ता मान कर उसके बलिदान पर भरोसा करते हैं।

उन इस्राएलियों को प्रभु परमेश्वर ने एक और निर्देश दिया था। उस बलि के मेमने की कोई भी हड्डी नहीं तोड़ी जानी थी। इसी प्रकार जब प्रभु यीशु बलि हुआ तब उसकी भी कोई हड्डी नहीं तोड़ी गई। क्रूस पर मसीह यीशु के मरने के बाद उसकी तथा उसके साथ क्रूसित दोनों डाकुओं की लाश को क्रूस पर से उतारने पहुँचे रोमी सिपाहियों ने जो कुछ किया वह विवरण यूहन्ना रचित सुसमाचार के उन्नीसवें अध्याय में लिपिबद्ध है। मूसा के समय के इस्राएलियों ने जब फसह के मेमने सम्बन्धी परमेश्वर के संदेश पर विश्वास किया तो मिस्रियों के पहिलौठों को मारने वाली महामारी से उनके पहिलौठे बच गये। वर्तमान काल में परमेश्वर का सन्देश यह है : ''प्रभु यीशु पर विश्वास कर तो तू. . . उद्धार पाएगा।''

<u>विचारणीय बाइबॅल-पद</u>

उत्पत्ति 37:3 ,4 ,23-28 ; उत्पत्ति 39 ; उत्पत्ति 41:38-43 ; फिलि0 2:5-11 ; उत्पत्ति 41:55-57 ; उत्पत्ति 39:2 ,21-23 ; 40:8 ; 41:16 ,25 ,32 ,38-39 ; भ0सं0 62:5 ; उत्पत्ति 46:5-7 ; उत्पत्ति 47:11-12 ; निर्ग0 1:6-11 ; निर्ग0 2:1-10 ; निर्ग0 2:11-15 ; यिर्म0 17:5-6 ; यशा0 50:10-11 ; निर्ग0 3:1-10 ; निर्ग0 3:13 ,14 ; यूह0 6:35 , 8:12 , 10:7 ,14 , 11:25 , 14:6 , 15:1 ; निर्ग0 5:1-2 ; निर्ग0 7:14-12:30 ; यूह0 1:29 ; इब्रा0 9:22 ; निर्ग0 12:46 ; यूह0 19:31-36 ; प्रे0का0 16:31।

7

व्यवस्था एवं मिलाप-तम्बू

मिस्र के राजा की गुलामी से इस्राएलियों को कौन छुड़ाया? मिस्र से बाहर निकलते समय परमेश्वर ने इस्राएलियों की अगुवाई कैसे की? परमेश्वर उन्हें किस देश की ओर ले जा रहा था? परमेश्वर उन इस्राएलियों को उस देश में ले जा रहा था जिसके बारे में उसने अब्राहम से वायदा किया था, और जहाँ मिस्र आने से पूर्व याकूब एवं उसके पुत्र रहते थे।

इस्राएली लोग मिस्र की दासता से मुक्त होकर खुश थे। लेकिन कुछ ही समय बाद वे कुड़कुड़ाने-बड़बड़ाने लगे। लाल समुद्र के पास पहुँचने पर, मूसा और हारून के विरुद्ध वे शिकायत करने लगे। वहाँ उनके सामने समुद्र था, अगल-बगल पहाड़ और पीछे से पीछा कर रही मिस्री सेना। क्या ऐसी भीषण समस्या से वे स्वयं को बचाने में सक्षम थे? क्या हुआ? परमेश्वर ने उन्हें क्या करने की आज्ञा दी? उनका परमेश्वर उन्हें कैसे बचाया? पवित्रशास्त्र में जवाब बिल्कुल स्पष्ट है - सारा काम प्रभु परमेश्वर ने किया, और यह सच्चाई आज भी सच है। प्रभु परमेश्वर ने लाल समुद्र को दो फाँक करके सूखे रास्ते से उनकी अगुवाई की। जब प्रभु ने इस्राएलियों को लाल समुद्र पार करा दिया, तो क्या मिस्र के सैनिक उनका पीछा करना छोड़ दिए? जब इस्राएली समुद्र पार कर चुके, तब क्या हुआ? इस पूरे विवरण को पवित्रशास्त्र में पढ़ने से बात बिल्कुल स्पष्ट हो जाएगी।

परमेश्वर की सन्तान होने से पूर्व हमारा जीवन भी लाल समुद्र के पास खड़े इस्राएलियों के समान था। हमारे सामने मृत्यु व नरक का नजारा था, हमारे इर्द-गिर्द पाप-स्वभाव हमें दास बनाए था, और शैतान हमारा पीछा करके हमें बर्बाद करना चाहता था। परन्तु क्रूस पर हमारे

बदले अपनी मृत्यु के द्वारा मसीह यीशु ने हमारे बचने का मार्ग तैयार कर दिया। पाप, मृत्यु और शैतान के अधिकार रूपी चंगुल से छुटकारे का एकमात्र मार्ग प्रभु यीशु ही है। इस्राएलियों ने जब अपने शत्रुओं को लाल समुद्र में मृतक देखा होगा तो उन्होंने क्या किया होगा? प्रभु की स्तुति-महिमा। प्रभु परमेश्वर ने जैसे इस्राएल को मिस्रियों से छुड़ाया, उसी प्रकार हमें शैतान, पाप और नरक से छुटकारा दिया है। उन इस्राएलियों की तरह हम भी आनन्द के साथ प्रभु परमेश्वर की आराधना स्तुति व प्रशंसा कर सकते हैं। यह आराधना-स्तुति का मन सिर्फ किसी आत्मिक सभा तक ही सीमित नहीं रहता। ऐसे विश्वासी हर समय, हरेक स्थान व हरेक परिस्थिति में पवित्र आत्मा के फल के अनुसार परमेश्वर को दण्डवत करते रहते हैं। ऐसी आराधना विश्वासीजन की परिस्थिति का शिकार नहीं होती।

लाल सागर पार करने के बाद, इस्राएलियों को किस समस्या का सामना करना पड़ा? पानी का अभाव। इस कठिनाई में भी प्रभु परमेश्वर इस्राएलियों को अद्‌भुत तरीके से जल प्रदान किया। वे अपने-आप के लिए जल का इन्तज़ाम करने में बिल्कुल असमर्थ थे। उनके लिए भोजन की भी कमी हुई, और परमेश्वर ने उनके लिए भोजन भी प्रदान किया। क्या परमेश्वर द्वारा उनके लिए किए गये इन सभी आश्चर्यकर्मों को उन इस्राएलियों ने स्मरण रखा? क्या उन्होंने अपनी आवश्यकताओं की आपूर्ति के लिए उस पर भरोसा रखा? नहीं! उन्होंने तो मूसा और परमेश्वर के विरुद्ध शिकायत शुरू कर दी। तब क्या हुआ? क्या परमेश्वर ने उन्हें और भोजन दिया? हाँ! वह खास भोजन क्या था? प्रतिदिन सुबह आकाश से 'मन्ना' गिराकर भोजन दिया। ऐसा क्यों? उनके प्रत्येक दिन की भोजन की ज़रूरत दैनिक आपूर्ति से पूरी हुई - आज का भोजन आज और कल का भोजन कल, जिससे वे (अगले दिन की आवश्यकता पूर्ति के लिए) परमेश्वर पर आशा-भरोसा रखना सीखें।

जब प्रभु यीशु इस धरती पर था तब लोगों ने उससे यह सिद्ध करने के लिए कहा कि वही **छुटकारा देने वाला** है। ऐसा कहने वाले यहूदियों ने प्रभु यीशु से कहा कि मूसा तो मरुभूमि में हमारे पूर्वजों को *मन्ना* खिलाकर यह दर्शाया कि उन्हें मिस्र से छुटकारा देने वाला वही है। इस प्रकार उन्होंने यीशु से भी अपना प्रमाण देने को कहा। इस सम्बन्ध में यूहन्ना के सुसमाचार के 6:32-35 में लिखित प्रभु यीशु के जवाब पर ध्यान देना सहायक होगा। जैसे इस्राएली उस मरुभूमि में अपने भोजन के लिए कोई उपाय करने में असमर्थ थे, उसी प्रकार हम अपने पाप से उद्धार के लिए स्वयं कोई उपाय करने में असमर्थ थे, और भरपूर आध्यात्मिक मसीही जीवन के लिए भी कोई उपाय करने में हम असमर्थ हैं। प्रभु यीशु ने कहा कि अनन्त जीवन की रोटी **वही** है। जैसे परमेश्वर ने इस्राएलियों के लिए स्वर्ग से ''मन्ना'' रूपी भोजन भेज कर उनके भौतिक जीवन की आवश्यकताओं को पूर्ण किया, उसी प्रकार स्वर्ग से ''मसीह'' को भेजकर हमारे अनन्त जीवन की आवश्यकता को पूर्ण किया है।

असंभव परिस्थिति में इस्राएलियों के लिए परमेश्वर द्वारा अद्‌भुत तरीके से भोजन-प्रबन्ध करने के कुछ ही समय बाद, वे फिर मूसा से झगड़ने व कुड़कुड़ाने लगे। इस बार क्या कमी थी? पुनः पानी का अभाव हुआ। उन इस्राएलियों को क्यों जल नहीं मिल पा रहा था? उनके लिए पानी के उपाय के लिए परमेश्वर ने मूसा को क्या करने का आदेश दिया? मूसा को अपनी लाठी से परमेश्वर द्वारा दिखाए गये चट्‌टान पर मारने का आदेश मिला। परमेश्वर ने उनके लिए वह काम किया, जो मनुष्य अपने लिए नहीं कर सकता था। हाँ, यदि मूसा को कुंआँ खोदने या गड्‌ढा बनाने के लिए कहा गया होता, तो शायद मनुष्य की दृष्टि में ज्यादा तर्कसंगत लगता, क्योंकि तब मनुष्य इस जल-प्रबन्ध की व्याख्या दे सकता। लेकिन उस समय परमेश्वर ने जो कुछ किया वह तो वास्तिविक ईश्वरीय आश्चर्यकर्म था। मरुभूमि की एक चट्‌टान से केवल प्रभु परमेश्वर ही इस प्रकार जल निकाल सकता था। इस प्रकार उन इस्राएलियों को केवल प्रभु परमेश्वर ही बचा सकता था, और यह बात हमारे लिए भी सच है।

इस्राएलियों को जीवित रहने के लिए भौतिक जल की ज़रूरत थी। हमें भी अनन्त जीवन प्रदान करने वाले जल की ज़रूरत है। उस मरुभूमि की उस चट्टान से इस्राएलियों के जीवित रहने हेतु जल मिला, और हमारे अनन्त जीवन के लिए यीशु मसीह रूपी चट्टान से जीवन-जल मिला है। यूहन्ना के सुसमाचार में प्रभु यीशु और सामरी स्त्री के वार्तालाप का वर्णन पाया जाता है। प्रभु ने उस स्त्री से अनन्त जीवन देने वाले जल की बात की। उस मरुभूमि में इस्राएलियों को जल देने के लिए उस चट्टान को मारा जाना ज़रूरी था। हम लोगों को अनन्त जीवन रूपी जीवन-जल देने के लिए परमेश्वर द्वारा ''मसीह'' को मारना ज़रूरी था, और यह ईश्वरीय कार्य क्रूस पर हमारे बदले मसीह की मृत्यु द्वारा पूरा हुआ। हमारे स्थान पर मसीह की मृत्यु रूपी सच्चाई पर विश्वास करने के द्वारा ही अनन्त जीवन देने वाला जीवन-जल मिलता है। अपने उद्धारकर्ता के रूप में प्रभु यीशु मसीह पर विश्वास करने वालों की समस्त आध्यात्मिक आवश्यकताएं पूर्ण होती हैं : पाप की क्षमा, परमेश्वर के समक्ष स्वीकार्यता, परमेश्वर से मेल-मिलाप, और परमेश्वर के साथ स्वर्ग में सदा-सर्वदा के लिए अनन्त जीवन। ऐसे विश्वासी चिन्ता व भ्रम में नहीं जीते। ऐसे विश्वासियों की आत्मिक भूख-प्यास तृप्त होती है। हमने परमेश्वर के विरुद्ध पाप किया था, अतः परमेश्वर द्वारा हमें दण्ड मिलना था। परन्तु प्रभु यीशु ने हमारा दण्ड अपने ऊपर लिया। जैसे मूसा की मार से उस चट्टान से इस्राएली लोगों के लिए जल-धारा फूट निकली, उसी प्रकार हमारे बदले परमेश्वर ने यीशु को मारा (दण्डित किया)। वह हमारे बदले मारा गया और उससे हमारे वास्ते अनन्त जीवन देने वाला जल-स्रोत फूट निकला।

आगे चलकर, प्रभु की अगुवाई में इस्राएली लोग सीनै पर्वत के समीप पहुँचे, जहाँ प्रभु परमेश्वर उन्हें अपनी व्यवस्था प्रदान किया। सीनै पर्वत पर प्रभु परमेश्वर ने अपनी सामर्थ्य एवं पवित्रता को सघन धुआँ, गर्जन, बिजली की चमक, अग्नि, भूकम्प एवं भारी स्वर में प्रदर्शित किया। परमेश्वर की सामर्थ्य को देखकर इस्राएली भयभीत हो

गये। तब परमेश्वर बोला और इस्राएलियों को दस आज्ञाएं दिया। व्यवस्था के प्रस्ताव के साथ इस्राएलियों ने प्रभु परमेश्वर के साथ अनुग्रह की अधीनता (निर्ग0 19:4) का सम्बन्ध खो दिया। ईश्वरीय आज्ञाओं को मानने के प्रस्ताव के प्रत्युत्तर में उन्हें तो कुछ इस प्रकार का जवाब देना चाहिए था : 'इनमें से किसी भी आज्ञा को पूर्णरूपेण पूरा करने में हम असमर्थ हैं, हे प्रभु, हमें तो आपकी दया के अधीन ही रहना है'। इसके बजाय उन लोगों ने यह सोचा कि वे परमेश्वर की सारी आज्ञाओं का पूरा पालन करेंगे, और वह उनकी सारी ज़रूरतों को पूर्ण करता रहेगा। अपनी बल-बुद्धि के सहारे परमेश्वर को प्रसन्न करने के लिए मनुष्य द्वारा किया जाने वाला स्व-प्रयास व्यवस्था है। व्यवस्था की अधीनता में होने का मतलब यह था कि जब वे परमेश्वर की किसी आज्ञा का उल्लंघन करते तो परमेश्वर उनकी सहायता व संरक्षा नहीं करता और उस अवज्ञा के बदले उन्हें दण्ड मिलता। प्रभु परमेश्वर उनकी सहायता व संरक्षा के लिए तैयार था, बशर्ते वे उसकी आज्ञाओं को मानते। अब उन्होंने ऐसे तौर-तरीके की अधीनता स्वीकार की थी जिसके अनुसार उन्हें परमेश्वर को अपने कर्म-प्रयास से प्रसन्न करना था। अब उन्हें ईश्वरीय आशीष के लिए परमेश्वर की आज्ञाओं के पूर्णपालन रूपी शर्त को पूरा करना ज़रूरी था। व्यवस्था दिए जाने के बाद इस्राएलियों ने मूसा से यह कहा : ''जो कुछ यहोवा ने कहा है, **वह सब** हम करेंगे''। इसके पश्चात् क्या हुआ? ध्यान दें (निर्ग0 19:9-25)! तत्पश्चात् प्रभु परमेश्वर ने दस आज्ञाएं दीं (निर्ग0 20:1-19)।

प्रभु परमेश्वर ने हमें जो आशिषें दी हैं उनके बारे में हम क्या सोचते हैं? क्या ये आशिषें हमें इसलिए मिलती हैं कि हम उसकी आज्ञाओं का पालन करते हैं? यदि हम परमेश्वर की किसी आज्ञा का उल्लंघन कर दें, तो क्या वह हमसे विमुख होकर अनन्त जीवन छीन लेगा? नहीं। हम, मसीही विश्वासियों को परमेश्वर की ओर से प्राप्त आशिषें हमारे आज्ञा-पालन या व्यवस्था-पालन पर निर्भर नहीं हैं। हमें प्राप्त ईश्वरीय आशिषें, क्रूस पर मसीह द्वारा पूरा किए गए काम पर आधारित हैं। पहला पतरस 2:9 के अनुसार ''मसीह में'' अपनी स्थापना

श्रेष्ठ-स्थिति के कारण विश्वासियों को वह सब मिल चुका है जिसे इस्राएली अपनी आज्ञाकारिता के माध्यम से पाने की कोशिश कर रहे थे। प्रभु यीशु, इस धरती पर रहते हुए, परमेश्वर की सारी आज्ञाओं का पूर्णरूपेण पालन किया; और अब हमें उसी की धार्मिकता प्रदान की गई है। मसीह की यह धार्मिकता हमसे कभी छीनी नहीं जाएगी। क्या इसका मतलब यह है कि हम जब चाहें तब परमेश्वर की आज्ञाओं की अवहेलना करें और परमेश्वर इसकी अनदेखी करता रहेगा? नहीं। इस सम्बन्ध में रोमियों 5:20-6:2 की सच्चाई पर मनन करना सहायक होगा।

जब किसी का बच्चा उसकी आज्ञा का उल्लंघन करता है, तो क्या वह व्यक्ति अपने बच्चे को घर से निकाल कर त्याग देता है? नहीं। लेकिन वह व्यक्ति अपनी संतान के आज्ञा-उल्लंघन की अनदेखी नहीं करता और न इसे बढ़ावा देता है। बल्कि अपनी उस संतान के प्रति चिन्ता व सतर्कता बरतते हुए उसकी और देख-रेख करता है। प्रभु परमेश्वर हमारे ऊपर से अपना अनुग्रह एवं दया-दृष्टि हटाकर हमें त्यागेगा नहीं। वह हमसे यह नहीं कहेगा कि अब तुम मेरी संतान नहीं हो। यदि हमसे आज्ञा-उल्लंघन भी हो जाए तब भी परमेश्वर पुनः यानि 'दोबारा' दण्ड नहीं देगा; क्योंकि हमारे बदले मसीह को दण्डित किया जा चुका है। लेकिन हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि हमारे पाप-कर्म के स्वभाविक (शारीरिक या सांसारिक) परिणाम अवश्य हैं।

अपनी व्यवस्था देने के पश्चात् प्रभु परमेश्वर ने मूसा को मिलाप-तम्बू बनाने का निर्देश दिया। यह पवित्र तम्बू परमेश्वर के आदेश व निर्देश के अनुरूप ही बनना था। अतः प्रभु परमेश्वर ने मूसा के द्वारा मिलाप के तम्बू के प्रत्येक भाग को अपने निर्देश के अनुसार बनवाया; क्योंकि उस तम्बू का प्रत्येक हिस्सा प्रतिज्ञात् मसीह के बारे में कुछ न कुछ इंगित किया। उदाहरण के लिए उस तम्बू में प्रवेश द्वार के पास एक वेदी रखी होती थी जिस पर भेंट-बलिदान के लिए लाए गये पशु को बलि करके जलाया जाता था। लेकिन आजकल हमें ऐसी वेदी की कोई ज़रूरत नहीं है। क्योंकि अब परमेश्वर के समक्ष पशु-बलि भेंट

चढ़ाना ज़रूरी नहीं है। अब प्रभु यीशु हमारी वेदी और हमारे लिए बलिदान ठहरा है। हमारी सारी आध्यात्मिक, धार्मिक आवश्यकताओं की आपूर्ति **वही** है। हमारे पापों के लिए पूर्ण एवं अन्तिम बलिदान **वही** है। जिस वेदी पर भेंट-बलिदान का पशु मारा जाता था, वहाँ तक सामान्य इस्राएली आ सकते थे, लेकिन हाथ-पैर धोने की हौदी के पास केवल पुरोहितगण ही जा सकते थे। काँसे की बनी इस हौदी में रखे पानी से पुरोहित लोग अपना हाथ-पैर धोकर ही मिलाप-तम्बू के पवित्र स्थान में सेवकाई करते थे। यह हौदी और पानी परमेश्वर के वचन को दर्शाते हैं। जब परमेश्वर के वचन को हम सुनते हैं, उस पर विश्वास करते हैं और उसका पालन करते हैं तो यह हमारे सोच-विचार में परिवर्तन लाता है और हमें प्रभु यीशु की समानता में बढ़ाता जाता है। हममें मसीह का जीवन विकसित करने के द्वारा प्रभु परमेश्वर हमें परिपक्वता की ओर बढ़ाता है, और हमारे जीवन में यह कार्य परमेश्वर के वचन की शिक्षा से होता है।

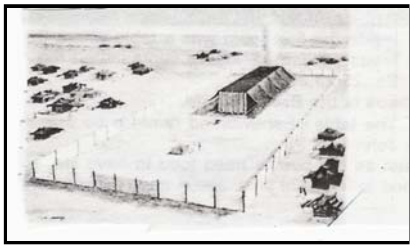

मिलाप-तम्बू के पहले कमरे में भेंट की रोटियों को रखने के लिए एक मेज़ होता था। उस पर याजक लोग बारह रोटियां रखते थे, जो इस्राएल के बारहों गोत्रों की प्रतीक होती थीं। भेंट की उन रोटियों की मेज़ यह दर्शाती है कि हमारे जीवन की रोटी यीशु मसीह है। हमारे शारीरिक जीवन के लिए शरीरिक भोजन की ज़रूरत है, और हमारी आत्मा को आत्मिक जीवन के लिए आध्यात्मिक भोजन की आवश्यकता है। प्रभु यीशु और उसका वचन ही आत्मिक भोजन हैं। इसीलिए प्रभु यीशु को 'जीवन की रोटी' कहा गया है। अनन्त जीवन प्रदान करने वाली जीवन-रोटी केवल वही है। हमारी आत्मा परमेश्वर के वचन को सुनने, समझने तथा उस पर विश्वास करने से ही सन्तुष्ट होती है।

मिलाप तम्बू के पवित्र स्थान में रोशनी का एकमात्र साधन वह दीवट होता था, जिस पर सात दीपक रखे रहते थे। वह दीवट भी ख्रीस्त का परिचायक था। पवित्रशास्त्र के अनुसार प्रभु यीशु जगत की ज्योति है। प्रभु यीशु का कथन है कि जो उसके पीछे हो लेता है वह अन्धकार में नहीं चलता, बल्कि उसे वह ज्योति मिल जाती है, जो अनन्त जीवन में ले जाती है। उद्धार पाने से पहले हम भी अंधकार में चलते थे, वास्तविक सत्य को नहीं जानते थे और शैतानी झूठ पर विश्वास करते थे। परन्तु परमेश्वर के वचन की सत्य-शिक्षा ने हमारे जीवन का दीपक प्रकाशमान कर दिया है। अब हम जितना ही अधिक प्रभु से सीखते-समझते जाते हैं, हमारे जीवन की ज्योति उतनी ही अधिक तेज होती जाती है। इस प्रकार प्रभु परमेश्वर को और स्पष्टता से जानने-पहचानने की क्षमता में हम विकास करते हैं।

उस पवित्र तम्बू के पहले कमरे के भीतर एक धूप-वेदी होती थी जिस पर याजकगण परमेश्वर के लिए सुगन्धित लोबान जलाया करते थे। ऊपर उठते धूप की सुगन्ध, इस्राएलियों द्वारा परमेश्वर की स्तुति, आराधना और उससे प्रार्थना का प्रतीक होती थी। आजकल हमें ऐसी वेदी की इसलिए आवश्यकता नहीं है, क्योंकि प्रभु यीशु मसीह हमारे लिए वेदी समान है। अब हम परमेश्वर की स्तुति, आराधना और उससे प्रार्थना कर सकते हैं, क्योंकि हम मसीह के माध्यम से परमेश्वर के समक्ष स्वीकार्य हैं।

मिलाप-तम्बू के पवित्र स्थान और महापवित्र स्थान को क्या पृथक किए था? एक विशिष्ट परदा। वह परदा, महापवित्र स्थान अर्थात् परमेश्वर की उपस्थिति में प्रवेश की मनाही का प्रतीक था। यदि कोई उसकी उपस्थिति में जाता तो फौरन मर जाता। वह परदा परमेश्वर से मनुष्य के अलगाव को दर्शाता था। महापवित्र स्थान का वह परदा भी प्रभु यीशु की ओर इशारा किया। उस महापवित्र स्थान में एक तेज प्रकाश, वहाँ ईश्वरीय उपस्थिति को दर्शाता था; क्योंकि वहाँ प्रभु की उपस्थिति थी। लेकिन वह विशाल परदा उस ज्योति को लोगों की

दृष्टि से छिपाए रखता था। इसी प्रकार मसीह यीशु की देह में परमेश्वर की प्रकाशना भी छिपी रही। हाँ, लोगों ने उसे देखकर एक साधारण मनुष्य समझा। इस धरती पर उसका महिमावान ईश्वरीय स्वरूप केवल एक ही बार अर्थात् दिव्य रूपान्तर के समय ही अपने पूर्ण रूप में प्रकट हुआ। जब ''पूरा हुआ'' कह कर मसीह क्रूस पर मरा, तो उस परदे का क्या हुआ? उसे किसने फाड़ दिया? क्यों फाड़ दिया? वह परदा यह दर्शाने के लिए फाड़ दिया गया कि अब पाप का दण्ड-मूल्य चुकता हो चुका है, और मनुष्य के लिए परमेश्वर के पास आने का मार्ग खुल गया है। जब यीशु क्रूस पर मरा, तो हमारे वास्ते उसकी देह मारी-कूटी गई। चूँकि हमारे बदले मसीह की देह मारी-कूटी गई, इसलिए अब हम अपनी प्रार्थना के साथ परमेश्वर की उपस्थिति में प्रवेश कर सकते हैं।

मिलाप-तम्बू के महापवित्र स्थान के भीतर ''चोखे सोने से मढ़ा एक सन्दूक'' रखा रहता था। उस सन्दूक का ढकना चोखे सोने का बना था। उस ढकने को ''दया-आसन या प्रायश्चित का ढकना'' कहा जाता था। प्रत्येक वर्ष, एक बार वहाँ आकर महायाजक उस ढकने पर भेंट-बलि का लहू छिड़कता था। मसीह यीशु सीधे स्वर्ग में प्रवेश करके हमारे पाप के बदले अपने बलिदान-लहू को परमेश्वर के समक्ष प्रस्तुत किया। मसीह के बलिदान-लहू को प्रभु परमेश्वर पूर्णरूपेण ग्रहण किया। प्रभु यीशु अब पिता परमेश्वर की दाहिनी ओर विराजमान है। हमारे पापों के दाम को चुकता करने का उसका काम पूर्णतः पूरा हो चुका है। अब पाप के बदले अन्य किसी बलिदान की ज़रूरत नहीं है।

प्रभु परमेश्वर ने किसे महायाजक बनाया? अब हमारा महायाजक कौन है? उन दिनों परमेश्वर के समक्ष इस्राएली लोगों के बदले उनके याजक भेंट-बलिदान प्रस्तुत करते थे। क्या अब हमारे लिए ऐसा करने के लिए किसी की ज़रूरत है? नहीं। अब प्रभु यीशु ही हमारा महायाजक है। उसने हमारे पाप के बदले स्वयं अपना लहू दण्ड-मूल्य के रूप में अर्पित कर दिया है। इस वक्त हमारे महायाजक की भाँति वह स्वर्ग में विराजमान है। अब हम अपने महायाजक प्रभु यीशु के पास बेरोकटोक आ-जा सकते हैं।

मूसा को विस्तृत निर्देश दिया गया था कि वह ईश्वरीय आदेश के अनुसार मिलाप-तम्बू के निर्माण का प्रबन्ध करे। परन्तु शायद ऐसा कोई बुद्धिमान मनुष्य नहीं था जो उस अद्‌भुत पवित्र संरचना को बना सके। अतः पवित्र आत्मा ने एक खास व्यक्ति के जीवन में वास करके उसे यह संरचना बनाने की सद्‌बुद्धि एवं योग्यता प्रदान किया। **बसलेल** नामक एक व्यक्ति को अपने नियंत्रण में करके प्रभु परमेश्वर ने ईश्वरीय योजनानुसार उस पवित्र तम्बू का निर्माण करवाया। जैसे उस मिलाप-तम्बू के निर्माण हेतु पवित्र आत्मा ने **बसलेल** के जीवन को नियंत्रित किया, उसी प्रकार पवित्र आत्मा ने यीशु के जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को नियंत्रित किया ताकि उसका जीवन परमेश्वर की इच्छा के अनुरूप रहे और हमें हमारे पाप के दोष-दण्ड से छुटकारा दे सके।

विचारणीय बाइबॅल-पद

निर्ग0 14:13 ,14 ; निर्ग0 14:21-22 ; निर्ग0 14:23 ,24-31 ; रोमि0 6:14 ; यूह0 3:16 ; कुलु0 2:15 ; निर्ग0 15:1-4 ; गला0 5:22-23 ; निर्ग0 15:22 ,25 ,27 ; निर्ग0 16:1-31 ; यूह0 6:32-35 ; निर्ग0 17:1-6 ; यूह0 4:1-15 ; यूह0 7:38 ; निर्ग0 19:1-6 ,7 ,8 ,9-25 ; निर्ग0 20:1-19 ; प0पत0 2:9 ; रोमि0 5:20-6:2 ; निर्ग0 25:9 ; निर्ग0 27:1 ,2 ; निर्ग0 30:18 ,19 ; दू0कुरि0 3:18 ; निर्ग0 25:23 ,30 ; यूह0 6:27 ,35 ; निर्ग0 25:31 ,32 ; यूह0 1:4-8 ; नीति0 4:18 ; भ0सं0 36:9 ; निर्ग0 30:1-3 ; निर्ग0 26:31-33 ; मर0 9:2 ,3 ; इब्रा0 10:19-23 ; निर्ग0 25:10 ,11 ,17-21 ; निर्ग0 28:1 ; इब्रा0 4:14-16 ; निर्ग0 31:1-3।

8

राजाओं एवं नबियों का काल

इस्राएलियों का इतिहास परमेश्वर के अद्‌भुत कार्यों से भरपूर है। परमेश्वर ने उन्हें मिस्र की भयावह गुलामी से छुड़ाया। लाल सागर को दो फाँक करके उनके लिए मार्ग बनाया और मिस्री सैनिकों को उस समुद्र में ही नष्ट कर दिया। भोजन की आवश्यकता पड़ने पर उन्हें ''मन्ना'' प्रदान किया। जल की ज़रूरत पड़ने पर उन्हें चट्‌टान से पानी प्रदान किया। इतना ही नहीं, सीनै पर्वत पर प्रभु परमेश्वर ने अपनी महिमापूर्ण सामर्थ्य को भी प्रदर्शित किया। किन्तु परमेश्वर के इन सब आश्चर्यकर्मों को देखने के बावजूद भी, उन्होंने उसके वचन (वायदों) पर विश्वास नहीं किया। चूँकि वे प्रभु के वचन पर विश्वास नहीं किए, इसलिए उसकी आज्ञाओं का उल्लंघन भी करते रहे।

जब मूसा को प्रभु परमेश्वर ने सीनै पर्वत पर बुलाया कि उसे *दस आज्ञाएं* दे, तब उन लोगों ने क्या किया? निर्गमन 32:1-7 से स्पष्ट है। सीनै पर्वत पर अपना निर्देश देने के बाद, प्रभु परमेश्वर उन्हें कनान देश की सरहद की ओर ले गया। वहाँ पहुँचने पर परमेश्वर ने मूसा को भेदियों के द्वारा क्या पता लगाने के लिए कहा? उन भेदियों ने कनान के भीतर से वापस आकर क्या कहा? उनमें से दस भेदियों ने कनान पर अधिकार करना क्यों असम्भव बताया? वहाँ के लम्बे-चौड़े व बलवान लोगों को देख कर वे दस भेदिए यह भूल बैठे कि परमेश्वर के लिए कुछ भी असम्भव नहीं है। क्या किसी भेदिए ने यह सोचा कि परमेश्वर उन्हें वह देश दे सकता है? हाँ! उन बारह में से दो भेदियों ने कनान के बलवान लोगों पर ध्यान देने के बजाय अपने प्रभु परमेश्वर पर मन लगाया और उसे कनान के बलवान लोगों से अधिक महान माना। उन दोनों का नाम था - यहोशू एवं कालेब। लेकिन शेष दस भेदियों ने स्वयं पर और कनानी लोगों पर ध्यान दिया; अतः विघ्न-बाधा

और निराशा ही दिखाई दी। वे दस लोग दिखाई देने वाली परिस्थिति के सहारे जी रहे थे, जबकि यहोशू और कालेब अदृश्य परमेश्वर पर दृष्टि लगा कर, विश्वास के सहारे चल रहे थे। उन दोनों ने कठिन परिस्थिति को परमेश्वर की ओर देखते रहने के एक सुनहरे अवसर के रूप में स्वीकार किया। अतः कोई आश्चर्य नहीं कि वे दस भेदिए शीघ्र ही समाप्त हो गये, जबकि दोनों विश्वासी भेदिए दीर्घायु हुए।

आइए इस्राएल के इस इतिहास से प्राप्त शिक्षा पर ध्यान दें। **मिस्र**, उद्धार नहीं पाए व्यक्ति का प्रतीक है। **मरुभूमि**, उद्धार पाए शारीरिक मसीही का प्रतीक है। **कनान** (पवित्र) आत्मा की अधीनता में चलने वाले व्यक्ति का प्रतीक है। जिस तरह इस्राएलियों को मिस्र की गुलामी में जीवन व्यतीत करते देख कर परमेश्वर खुश नहीं था। उसी प्रकार वह हमें आत्मिक मौत की जिन्दगी में नहीं देखना चाहता। जैसे उसने इस्राएल को मिस्र की गुलामी से मुक्त किया, उसी तरह उसने मसीह की मृत्यु के द्वारा हमें आत्मिक मृत्यु से मुक्त कर दिया है। उनका पीछा करने वाले मिस्री लोगों को लाल समुद्र में डुबा कर, प्रभु परमेश्वर ने इस्राएलियों को एक नये देश में और एक नई जीवन यात्रा में प्रवेश करने दिया। सैद्धान्तिक तौर पर अर्थात् परमेश्वर की दृष्टि में मसीह की मृत्यु के साथ हमारी एकता व पहचान स्थापित हो गई है, अर्थात् हम भी उसके साथ मरे और हमारा पुराना आदम-स्वभाव उसकी मृत्यु में गाड़ा गया (प0कुरि0 10:1-2, रोमियों 6:3-4)।

इस प्रकार, मसीह के क्रूस पर दो कार्य सम्पन्न हुए। **पहला**, हम पाप के दण्ड से मुक्त किए गये - हमारे बदले मसीह मरा। **दूसरा**, हम पाप की प्रभुता या उसके राज्य-शक्ति से मुक्त किए गये - हम भी मसीह के साथ मर गये (रोमियो0 6:6)। पहला कार्य प्रतिस्थापन्न है, अर्थात् हमारे स्थान पर मसीह का मरना। दूसरा कार्य पहिचान, एकता या समानता को दर्शाता है, अर्थात् मसीह के साथ हमारी मृत्यु (रोमियों 6:3-6)। इन आध्यात्मिक सच्चाईयों को हमारे दैनिक जीवन में व्यवहारिक बनाना **पवित्र आत्मा** का काम है। जैसे-जैसे इन सच्चाईयों

को हम पहचानने लगते हैं, वैसे-वैसे पवित्र आत्मा इन्हें विश्वासपूर्वक अपनाने की हमें क्षमता प्रदान करता है। इस्राएल को मिस्र से निकाल कर लाल समुद्र के रास्ते कनान पहुँचाने के पीछे परमेश्वर का उद्देश्य उन्हें भरपूरी के जीवन में ले जाना था। प्रभु परमेश्वर विश्वासियों को भी आत्मिक मृत्यु से निकालकर नये जीवन की चाल में विकसित करना चाहता है।

मिस्र से कनान तक पहुँचने में इस्राएलियों को चालीस वर्ष क्यों लगे? आज भी बहुत से विश्वासी (आत्मिक मायने में) मरुभूमि या उजाड़ स्थान में क्यों जीवन बिताते हैं? अविश्वास के कारण। जैसे कि उन इस्राएलियों ने यह विश्वास नहीं किया कि मिस्र की गुलामी से आश्चर्यपूर्ण तरीके से छुटकारा देने वाला प्रभु परमेश्वर, उन्हें प्रतिज्ञात् देश पहुँचाने में पूर्णतः सक्षम एवं विश्वसनीय है। अधिकतर विश्वासी उस पराजित शत्रु (पुराना स्वभाव, पाप-स्वभाव) के प्रभावकारी नियंत्रण में जीवन बिताते हैं, जो रोमियों 6:6 के अनुसार 'मसीह के साथ क्रूस पर चढ़ाया जा चुका' है। हमारे लिए परमेश्वर द्वारा पूर्ण किए गये कार्य पर अविश्वास ही हमें भरपूरी के आध्यात्मिक जीवन से वंचित किए है। मिस्र से निकलने के लिए जिस **विश्वास** की आवश्यकता थी, वही **विश्वास** प्रतिज्ञात् देश में प्रवेश हेतु भी ज़रूरी था। मसीह के विश्वासियों के जीवन के सम्बन्ध में भी यही सच्चाई सच है।

प्रभु परमेश्वर (के वचन) पर अविश्वास के लिए इस्राएलियों को क्या दण्ड मिला? उनकी उस सारी पीढ़ी को उस बियावान में ही मरना पड़ा। जब उन्हें पानी की आवश्यकता थी, तब मूसा ने परमेश्वर के आदेश के अनुसार एक चट्टान पर अपनी लाठी से प्रहार किया था और इस्राएलियों के लिए जल-धारा फूट निकली थी। फिर भी, उन्होंने अपने कार्य-व्यवहार में परमेश्वर के प्रति अविश्वास व्यक्त किया। प्रभु परमेश्वर पुनः उन्हें उसी मरुभूमि में चक्कर लगाने दिया। एक बार फिर उन्हें बड़ी प्यास लगी, और जल नहीं मिल रहा था (गिनती 20:2-6)। अब, जब फिर उन्हें पानी की ज़रूरत पड़ी तो उन्हें क्या करना चाहिए

था? पिछली बार उन्हें पानी किसने प्रदान किया था? पिछली बार परमेश्वर ने मूसा से एक खास चट्टान पर अपनी लाठी से प्रहार करने का आदेश दिया था। इस बार पानी की ज़रूरत पड़ने पर परमेश्वर ने मूसा से क्या कहा? क्या मूसा ने ठीक वही किया जैसा कि प्रभु परमेश्वर ने निर्देश दिया? इस बार परमेश्वर ने चट्टान को (मानवीय प्रयास से) मारने का आदेश नहीं दिया (गिनती 20:8), बल्कि चट्टान से सिर्फ 'बात करने को कहा कि वह चट्टान अपना पानी दे'। यही तथ्य मसीह के बारे में भी सच है। मसीह के केवल एक ही कर्म (प्रयास) से सब कुछ पूरा हो चुका है। अब तो हमें उसके कार्य को सिर्फ विश्वासपूर्वक अपनाने की ज़रूरत है। चूंकि जल सम्बन्धी इस दूसरी घटना के समय मूसा ने ईश्वरीय आदेश का विश्वासपूर्वक पालन नहीं किया, इस लिए प्रभु परमेश्वर ने उसे प्रतिज्ञात् देश में प्रवेश नहीं करने दिया।

उस चट्टान से जल की प्राप्ति **मसीह** की एक तस्वीर पेश करता है। पहली बार मूसा द्वारा चट्टान पर प्रहार यह दर्शाता है कि हमारे वास्ते अनन्त जीवन रूपी जल की उपलब्धता के लिए मसीह का एक बार मारा जाना अत्यावश्यक था। परन्तु दूसरी बार मूसा के लिए यह आदेश था कि वह उस चट्टान से सिर्फ बोले और तब जल उपलब्ध हो जाएगा। यह इस सच्चाई का प्रतीक है कि मसीह को हमारे पापों के लिए केवल एक ही बार मरना आवश्यक था। हमारे पापों के लिए उसे दूसरी बार दुःख-दण्ड उठाने की ज़रूरत नहीं है।

गिनती की पुस्तक के इक्कीसवें अध्याय के दूसरे पद के अनुसार इस्राएलियों ने परमेश्वर से एक मन्नत मानी और उस मन्नत के अनुसार प्रभु परमेश्वर ने उन्हें उन कनानियों पर विजय प्रदान किया, जिन्होंने कुछ इस्राएलियों को बन्दी बना लिया था। लेकिन इस्राएली प्रजा शीघ्र ही परमेश्वर द्वारा उनके लिए किए गये कामों को भूल गई, और उसके विरुद्ध कुड़कुड़ाने व विद्रोह करने लगी। इस्राएलियों के इस अविश्वासपूर्ण विद्रोह को परमेश्वर ने किस प्रकार दण्डित किया? विषैले

सर्पों के द्वारा जिन्होंने उन्हें काटा और बहुत से इस्राएली मर गये। जब मूसा ने उनके लिए प्रार्थना किया, तो परमेश्वर ने सर्पों द्वारा डंसे गये शेष इस्राएलियों के इलाज के लिए क्या उपाय दर्शाया? उस उपाय के बारे में विचार करने से पूर्व नीकुदेमुस से यीशु की भेंट-वार्ता का ज़िक्र सहायक होगा। एक दिन फरीसी सम्प्रदाय का नीकुदेमुस नामक एक यहूदी प्रभु यीशु से भेंट करने आया। प्रभु यीशु ने उससे कहा कि उसे ''नया जन्म'' की ज़रूरत है। इस बात को नीकुदेमुस नहीं समझा। तब प्रभु यीशु ने उससे कहा कि यह नया जीवन तब मिलता है जब कोई व्यक्ति मसीह को पापों से छुटकारा देने वाला मानकर, उस पर आशा-भरोसा व विश्वास करता है। जब मसीह को क्रूस पर कीलों से जकड़ा गया, तब वह हमारे समस्त पापों के दोष-दण्ड को अपने ऊपर ले लिया। उस वक्त पिता परमेश्वर ने मसीह यीशु को अपने परम पवित्र पुत्र के रूप में नहीं देखा। चूँकि हमारे सब पापों को पिता परमेश्वर ने उसी पर डाल दिया, इसलिए मसीह ऐसा दिखा जैसे कि **वह** हमारे जैसा हो गया हो; सारे संसार के पापों का दोष-दण्ड अपने ऊपर लिए, क्रूस पर लटका मसीह। हाँ, यीशु **मसीह** हमारे पापों के बदले दण्डित हुआ।

सर्पों द्वारा डसे गये उन इस्राएलियों की चंगाई का इलाज परमेश्वर ने यह बताया कि एक ''विषैला सर्प बनाकर खम्भे पर लटकाया'' जाए, और जो कोई उसे देखेगा वह चंगा होकर जीवित रहेगा। जैसे उन इस्राएलियों ने उस खम्भे पर लटकाए गये सर्प को देख कर जीवन पाया, उसी प्रकार हम मसीह की ओर देखने पर जीवन दान पाते हैं, जो हमारे पापों को अपने ऊपर लेकर हमारा दोष-दण्ड सहा। अब हम, विश्वासी गण आत्मिक तौर पर चंगा कर दिए गये हैं। हम जिस अनन्त पाप-दण्ड के लायक थे, उससे सदाकाल के लिए मुक्त कर दिए गये हैं।

उस मरुभूमि में चालीस वर्षों तक भ्रमण करते हुए, वे इस्राएली मर गये, जो यह विश्वास नहीं करते थे कि परमेश्वर उन्हें प्रतिज्ञात् देश

में पहुँचा सकता है। मूसा के मरने के बाद प्रभु परमेश्वर ने यहोशू को इस्राएलियों का अगुवा बनाया। इस्राएलियों को प्रतिज्ञात् देश में प्रवेश कराने के बाद अर्थात् यहोशू के समय तक, इस्राएलियों ने प्रभु का अनुसरण किया। लेकिन यहोशू तथा उसकी पीढ़ी के लोगों की मृत्यु के बाद इस्राएली लोग शीघ्र ही प्रभु से विमुख होने लगे। वे लकड़ी-पत्थर की बनाई प्रतिमाओं की पूजा करने लगे, जैसा कि कनान में बसी अन्य जातियां करती थीं। इस्राएल के इस पाप के कारण प्रभु परमेश्वर उनके आसपास बसी जातियों को उन पर विजयी होने दिया (न्यायियों 2:7-16)।

इस्राएली लोगों पर जब अन्य जातियाँ विजयी होती थीं, तब वे स्वयं को उनसे स्वतंत्र नहीं कर पाते थे। लेकिन जब वे अपने प्रभु परमेश्वर की ओर फिरते थे, तब वह उनके लिए किसी छुड़ानेवाले अगुवे को खड़ा करता था। आक्रामक लोगों से इस्राएलियों को छुड़ाने वाले अगुवे अपनी शक्ति से उन्हें छुड़ाने में असमर्थ होते थे। परन्तु पवित्र आत्मा उन्हें यह काम करने की बल-बुद्धि प्रदान करता था। क्या परमेश्वर की ओर से नियुक्त उन अगुवों (न्यायियों) द्वारा कनान देश के आक्रामक लुटेरों से मुक्त होने पर इस्राएली लोग प्रभु का अनुसरण करते रहे? नहीं। वे परमेश्वर की अगुवाई एवं अनुग्रह के बावजूद बारम्बार विद्रोह करते रहे।

याजकों, न्यायियों और नबियों की अगुवाई के अनुसार परमेश्वर की अधीनता में रहना इस्राएल को अच्छा नहीं लगा। उन लोगों ने अन्य जातियों की तरह अपने लिए भी एक पार्थिव राजा की मांग की। अब प्रभु परमेश्वर को अपना राजा मानना छोड़कर, वे अपनी मनमर्जी के कामों में लग गये। वे अपने चहुंओर की जातियों (राष्ट्रों) के अनुसार सांसारिक राजा चाहने लगे। ऐसे राजा के अहितकर व्यवहार के बारे में बताये जाने के बावजूद भी, वह लोग संसारी राजा की ही मांग करने लगे। वे अपने लिए पार्थिव राजा मांगने शमूएल भविष्यवक्ता के पास पहुंचे। अन्ततः शमूएल ने शाऊल नामक व्यक्ति को इस्राएल का पहला

राजा नियुक्त किया। उस पर पवित्र आत्मा उतरा कि वह इस्राएलियों का राजा होने योग्य बने (प0शमू0 10:6)। परन्तु शाऊल परमेश्वर की अगुवाई एवं इच्छानुसार नहीं चला।

इसके बाद, प्रभु परमेश्वर ने दाऊद को इस्राएल का राजा नियुक्त किया। दाऊद किस मायने में शाऊल से भिन्न था? दाऊद जानता था कि वह एक पापी है, और परमेश्वर के समक्ष स्वीकार्यता के लिए प्रभु परमेश्वर की कृपा-दृष्टि पर आशा-भरोसा व विश्वास करता था। जब उसे राजा नियुक्त किया गया, तब पवित्र आत्मा शाऊल को छोड़कर दाऊद पर आया। पुराना नियम काल में समय-समय पर पवित्र आत्मा खास लोगों पर उतरता था ताकि उन विशिष्ट व्यक्तियों के द्वारा परमेश्वर के विशेष कार्य, उद्देश्य एवं इच्छा को पूर्ण करे। इन कामों में कुछेक कार्य यह थे : परमेश्वर का वचन बोलने या सुनाने हेतु, पवित्र वचन लिखवाने हेतु, परमेश्वर के लोगों की अगुवाई करने हेतु, उसकी प्रजा के शत्रुओं से संघर्ष करके उन पर विजयी होने हेतु। यहां दाऊद राजा के प्रसंग में यह भी ध्यान देने योग्य है कि उसे परमेश्वर की ओर से खास प्रतिज्ञा भी दी गई। कौन सी प्रतिज्ञा? यह प्रतिज्ञा कि दाऊद के वंश से ही संसार का प्रतिज्ञात् उद्धारकर्ता भी पैदा होगा (दू0शमू0 7:12-13)।

राजा दाऊद की मृत्यु के बाद उसका बेटा सुलेमान इस्राएलियों का राजा बना। राजा सुलेमान ने ही यरूशलेम में (परमेश्वर के) मन्दिर को बनवाया। उस मन्दिर का आन्तरिक हिस्सा भी मिलाप-तम्बू के समान था। अर्थात् भीतर बने दो कमरे और उन्हें अलग करने के लिए एक विशाल परदा। उस मन्दिर के महापवित्र स्थान में भी, वर्ष में एक बार, इस्राएलियों का महायाजक उसी प्रकार भेंट-बलिदान का लहू छिड़कता था जैसे कि मिलाप-तम्बू में। उस मन्दिर के पवित्र स्थान में भी परमेश्वर के बुलाए बिना प्रवेश करना मना था, अन्यथा मृत्यु-दण्ड मिलना था।

राजा सुलेमान के देहान्त के बाद इस्राएली राज्य दो भागों में विभाजित हो गया : **उत्तरी राज्य** के लोगों ने सुलेमान के वंशज के बजाय अन्य किसी को अपना राजा बनाया, और उस समय उस राज्य का नाम ''इस्राएल'' रखा। **दक्षिणी राज्य** के लोग दाऊद एवं सुलेमान के वंशजों को ही राजा बनाते रहे, और दक्षिणी राज्य को ''यहूदा'' नाम दिया गया। इन दोनों राज्यों के अधिकतर राजा अपनी प्रजा को प्रभु की इच्छा के विरुद्ध मूर्ति-पूजा की ओर ही भटकाते रहे। इनमें से बहुत ही कम राजाओं ने अपने लोगों को सच्चे परमेश्वर की उपासना एवं आज्ञाकारिता की ओर प्रोत्साहित किया।

प्रभु परमेश्वर आदिकाल से ही अपना संदेश सुनाने के लिए कुछ खास लोगों को अपना भविष्यवक्ता चुनता रहा है। जब वह किसी को अपना भविष्यवक्ता नियुक्त करता है तो पवित्र आत्मा उस व्यक्ति को बोलने के लिए ज्ञान, बुद्धि व वचन प्रदान करता है। परमेश्वर के अधिकतर भविष्यवक्ता (नबी) इस्राएल को चेतावनी देने हेतु नियुक्त हुए, किन्तु कुछेक भविष्यवक्ता आस-पास के देशों में भी भेजे गये। एक बार परमेश्वर ने अपने एक भविष्यवक्ता को अस्सीरिया भेजा, जो कि इस्राएल के निकट का ही एक देश था। इसी अस्सीरिया देश में ही नीनवे नामक दुष्टतापूर्ण नगर था। यद्यपि वहां के लोग बड़े पापी थे, फिर भी, परमेश्वर उन्हें बचने का एक अवसर प्रदान करना चाहता था और इस प्रकार उन्हें विनाश से बचाना चाहता था। अतः उसने वहां अपने एक नबी को भेजा। किन्तु प्रभु का वह नबी अस्सीरियाई लोगों से नफरत करता था और उन्हें बचते नहीं देखना चाहता था। इसलिए वह परमेश्वर की बुलाहट से दूर भागने लगा। उस नबी का नाम **योना** था। पवित्र बाइबॅल से योना 1:1-3:3 तक पढ़ना सहायक होगा। क्या योना का कोई अनुभव यीशु के किसी अनुभव की याद दिलाता है? जैसे योना उस मगरमच्छ के उदर में तीन दिन व तीन रात रहा, उसी प्रकार यीशु मसीह भी मरने के बाद गाड़े जाने पर, तीन दिन व तीन रात के बाद, परमेश्वर द्वारा कब्र में से जिलाया गया।

इस्राएल और यहूदा के लिए भविष्यवक्ताओं का संदेश भावी न्याय की चितौनियों से भरपूर होता था। इस्राएलियों को ईश्वरीय संदेश की चेतावनी देने हेतु परमेश्वर ने विभिन्न लोगों को इस्तेमाल किया। इनमें से कुछेक सुप्रसिद्ध नाम यह हैं :- यशायाह, यिर्मयाह, यहेजकेल और दानिएल। ये तथा अन्य कई भविष्यवक्ता इस्राएलियों को मन-फिराव, मूर्ति-पूजा-त्याग तथा केवल प्रभु परमेश्वर पर ही आशा भरोसा का संदेश देते रहे। ऐसा नहीं करने पर अस्सीरियाई एवं बेबिलोनी साम्राज्य के लोगों द्वारा उन पर आक्रमण करने तथा यरूशलेम के तहस-नहस होने सम्बन्धी ईश्वरीय चेतावनी भी दी गई।

प्रभु के उन नबियों द्वारा एक अन्य अत्यंत महत्वपूर्ण संदेश दिया जाता रहा - संसार के लिए प्रतिज्ञात् उद्धारकर्ता के आगमन की भविष्यवाणी। अदन की वाटिका में भावी उद्धारकर्ता के भेजे जाने सम्बन्धी इस वायदे को दिए बहुत समय हो चुका था। किन्तु प्रभु परमेश्वर अपने वायदे को नहीं भूलता। उन भविष्यवक्ताओं के द्वारा प्रतिज्ञात् उद्धारकर्ता के बारे में प्रभु परमेश्वर ने अनेक सच्चाईयों (तथ्यों) को प्रकट किया, और उसके आगमन की निश्चयता की याद दिलाता रहा।

दुःखद है कि बहुत से मूर्तिपूजक इस्राएलियों ने परमेश्वर के अनेक भविष्यवक्ताओं को सताया, कैद में डाला और मार डाला। उन्होंने अपने इर्द-गिर्द की जातियों के तौर-तरीकों की नकल की। हाँ ऐसे लोग यरूशलेम के मन्दिर में भेंट-बलिदान चढ़ाने भी जाते थे, और मूर्तियों की भी पूजा करते थे। इनमें से अनेक इस्राएली अपने मुंह से तो परमेश्वर की स्तुति-आराधना करते थे, मगर अपने मन में नहीं। तो फिर उन दिनों कैसे लोगों की उपासना परमेश्वर के समक्ष ग्रहणयोग्य थी? उन लोगों की उपासना जो अपने पापीपन को मानते थे और अपने उद्धार के लिए परमेश्वर की दया पर भरोसा रखते थे। ऐसे लोग बड़ी लगन के साथ प्रतिज्ञात् उद्धारकर्ता के आगमन की बाट जोहते थे।

बहरहाल, इस्राएलियों ने न तो परमेश्वर पर विश्वास किया और न ही अपना मन फिराया। अतः प्रभु परमेश्वर अस्सीरियाइयों और बेबिलोनी लोगों को उन पर आक्रमण करके विजयी होने दिया। इस्राएल और यहूदा दोनों राज्यों की यही गति हुई। क्योंकि उन्होंने मन-फिराव नहीं किया, और बेबिलोन तथा अस्सीरिया के लोगों ने उन पर कब्जा कर लिया। उन्होंने बहुत से इस्राएलियों को बन्दी बनाया, यरूशलेम की शहरपनाह को तोड़ डाला और वहां के यहूदी मन्दिर को ध्वस्त कर दिया।

उपर्युक्त आक्रमण के लगभग सत्तर वर्ष बाद, कुछ इस्राएली लोग यरूशलेम लौटे। वहां लौटकर उन्होंने उस शहर, उसकी शहरपनाह, और उसके मन्दिर का पुनःनिर्माण किया। उसी समय से इस्राएली लोगों को 'यहूदी' कहा जाने लगा। आगे चलकर, यहूदियों पर यूनानी लोग विजयी हो गये। इतना ही नहीं, और कई वर्षों के बाद, रोमी लोग यहूदियों पर विजय प्राप्त कर लिए। उन रोमी लोगों ने यहूदियों से जबरन टैक्स वसूलना शुरू कर दिया। टैक्स नहीं देने पर उन्हें कड़ी सज़ा दी जाती थी। रोमी लोगों ने कई यहूदियों को सूली पर चढ़ाकर या फिर तलवार से मार कर मौत के घाट उतार दिया। यहूदी लोगों के लिए यह अत्यंत कठिन समय था। लेकिन प्रभु परमेश्वर द्वारा चुना गया ''समय'' भी यही था, जबकि वह अपने ''पुत्र'' मसीह यीशु को संसार में भेजने वाला था।

विचारणीय बाइबॅल-पद

निर्ग0 32:1-7 ; गिन0 13:1-33 ; प0कुरि0 10:1-2 ; रोमि0 6:3-4 ,6 ; कुलु0 2:6 ; गिन0 20:2-11 ; निर्ग0 21:1-9 ; यूह0 3:14-16 ; यहोशू 1:1 ,2 ; 11:23 ; न्यायि0 2:7-19 ; प0शमू0 8:4-22 ; प0शमू0 10:6 ; प0शमू0 13:13 ,14 ; प0शमू0 16:13 ,14 ; दू0शमू0 7:12 ,13 ; दू0कुरि0 2:1 ,5:1 ; योना0 1:1-3:3 ; मत्ती0 15:7-8।

9

प्रतिज्ञात् मसीह

इस्राएलियों को प्रतिज्ञात् उद्धारकर्ता के आगमन के लिए तैयार करने हेतु यीशु के जन्म से पूर्व प्रभु परमेश्वर ने एक अन्य बालक को भविष्यवक्ता के रूप में चुना। उस बालक का नाम ''यूहन्ना'' (बपतिस्मा देने वाला) था, जो कि जकरयाह और इलीशिबा नामक दम्पति का पुत्र था। चूँकि यूहन्ना बपतिस्मा देने वाले को प्रतिज्ञात् उद्धारकर्ता के आगमन के लिए इस्राएलियों को तैयार करने का महत्वपूर्ण काम सौंपा गया था, अतः उसकी देखभाल एवं अगुवाई के लिए उस पर पवित्र आत्मा आया। उसके जन्म से पूर्व उसके माता-पिता को स्वर्गदूत द्वारा यह संदेश दिया गया था : ''प्रभु की दृष्टि में वह महान होगा, वह दाखरस और मदिरा नहीं पीएगा, और अपनी माता के गर्भ से ही पवित्र आत्मा से परिपूर्ण हो जाएगा। वह इस्राएल की सन्तानों में से बहुतों को उनके प्रभु परमेश्वर की ओर लौटा ले आएगा।'' इसके बाद अपने इस पुत्र के जन्म के समय याजक जकरयाह ने यह कहा :- ''तू, हे बालक, परम प्रधान का नबी कहलाएगा, क्योंकि तू प्रभु के आगे-आगे चलेगा कि उसका मार्ग तैयार करे।''

यूहन्ना बपतिस्मा देने वाले के जन्म के छः महीने बाद यीशु का जन्म हुआ। यीशु का जन्म अन्य किसी भी मनुष्य के जन्म से बिल्कुल भिन्न था, क्योंकि उसका कोई इहलौकिक पिता नहीं था। हाँ, मरियम उसकी माँ थी, और यूसुफ नामक व्यक्ति के साथ उसकी मंगनी हो चुकी थी। परन्तु एक कुँवारी के सन्तान होना कैसे संभव हुआ? यही प्रश्न स्वयं मरियम ने भी किया था। पवित्रशास्त्र बाइबॅल का जवाब यह है कि स्वयं पवित्र आत्मा परमेश्वर ने यह कार्य सम्पन्न किया। चूंकि यीशु पवित्र आत्मा द्वारा गर्भ में आया, और उसका कोई संसारिक पिता नहीं था, इसलिए उसमें पाप-स्वभाव भी नहीं था।

यूहन्ना बपतिस्मा देने वाले की सेवकाई मनफिराव की सेवकाई थी, अर्थात् लोगों को इस ज्ञान-पहचान में लाना कि वे पापी हैं और उन्हें एक उद्धारकर्ता की आवश्यकता है। वह पवित्र आत्मा पर आश्रित था। जब उससे यह पूछा गया कि वह कौन है, तो उसके उत्तर पर ध्यान दें : ''मैं.... एक पुकारने वाले की आवाज'' मात्र हूँ। यूहन्ना यह जानता था कि अपने आप में वह कुछ नहीं है। वह तो स्वयं को मसीह के जूते उठाने योग्य भी नहीं माना। आगे चलकर उसने यह दीनतापूर्ण टिप्पणी भी की : ''अवश्य है कि वह बढ़े और मैं घटूँ''। यही प्रवृत्ति सभी विश्वासियों में होनी चाहिए। कार्य करने वाला प्रभु परमेश्वर ही है। यूहन्ना बपतिस्मा देने वाले की शिक्षा का अनुसरण करने वाले लोगों ने इस साक्षी-स्वरूप (मनफिराव का) बपतिस्मा लिया कि अब वे यह मानते हैं कि वे पापी हैं और उन्हें एक उद्धारकर्ता की आवश्यकता है। यूहन्ना ने बिल्कुल स्पष्ट कर दिया कि प्रतिज्ञात् उद्धारकर्ता उससे बहुत महान है और उससे बहुत महान कार्य को सम्पन्न करेगा। यूहन्ना ने कहा कि प्रभु यीशु उन सबको पवित्र आत्मा प्रदान करेगा (मत्ती 3:11), जो उस पर विश्वास और भरोसा करेंगे। उसने कहा कि आने वाला उद्धारकर्ता अपने विश्वासियों को अविश्वासियों से अलग करेगा। अविश्वासी लोग अनन्त दण्ड पायेंगे।

जब तक वह तीस वर्ष का नहीं हुआ तब तक प्रभु यीशु नासरत में निवास किया। तीस वर्ष का होने पर, वह यूहन्ना के पास आकर बपतिस्मा लिया। मत्ती रचित सुसमाचार के 3:13-16 में वर्णित इस प्रसंग पर ध्यान दें। यीशु इसलिए बपतिस्मा नहीं लिया कि वह पापी था, बल्कि उसने यह प्रमाणित करने हेतु बपतिस्मा लिया कि वह यूहन्ना की शिक्षा-सेवा से सहमत है और यूहन्ना की सेवकाई परमेश्वर की ओर से है। जल में बपतिस्मा के बाद यीशु जैसे ही ऊपर निकला, तैसे ही ईश्वरीय इच्छा पूर्ण करने की योग्यता व सामर्थ्य प्रदान करने हेतु, उस पर पवित्र आत्मा का अवतरण हुआ।

अपने बपतिस्मा के बाद पवित्र आत्मा द्वारा प्रभु यीशु जंगल में ले जाया गया जहाँ शैतान द्वारा उसकी परीक्षा की गई। क्या प्रभु यीशु शैतान द्वारा प्रस्तुत प्रलोभन व परीक्षाओं का शिकार हुआ? नहीं, बिल्कुल नहीं। इसके विपरीत पहले आदम ने अपनी परीक्षा के समय शैतान का अनुसरण किया और सारी मनुष्य जाति को पाप में फँसा दिया। परन्तु प्रभु यीशु मसीह अपनी परीक्षा के समय पूर्णतः दृढ़ व स्थिर रहा और शैतानी प्रलोभनों में नहीं गिरा। चूँकि प्रभु यीशु ने अपने पिता की इच्छा का पालन किया और शैतान की आज्ञाओं को अस्वीकार करते हुए उसे पराजित किया, इसलिए अब हम परमेश्वर की संतान भी शैतान के अधिकार-सत्ता से मुक्त किए जा चुके हैं।

शैतान को पराजित करने के पश्चात् पवित्र आत्मा की अगुवाई में प्रभु यीशु पुनः गलील प्रदेश को लौटा, और वहाँ के यहूदी सभाघर में जाकर शिक्षा देने लगा। लूका के सुसमाचार में लिखित इस घटना का विवरण पढ़ना लाभप्रद होगा। यद्यपि वह (देहधारी) परमेश्वर था, फिर भी, प्रभु यीशु ने अपने बल-बुद्धि के सहारे इस धरती पर जीवन नहीं बिताया। इसके बजाय वह पवित्र आत्मा पर आश्रित जीवन व्यतीत किया। उसके विचार, वचन एवं कार्य-व्यवहार पवित्र आत्मा द्वारा नियंत्रित थे। इस संदर्भ में यूहन्ना रचित सुसमाचार के इन पदों पर ध्यान देना अत्यन्त सहायक होगा :- 5:19, 5:30, 6:38, 14:10।

अब हम विश्वासियों में भी पवित्र आत्मा का स्थायी वास है, ताकि हम मसीह के स्वभाव में परिवर्तित किए जाएं और बसलेल एवं **मसीह** की भांति हममें भी उसकी अगुवाई व योग्यता अपना कार्य करे। ईश्वरीय इच्छानुसार मिलाप-तम्बू निर्माण हेतु बसलेल अपने बल-बुद्धि से कुछ नहीं कर सकता था, और मसीह भी अपने देहधारी रूप में अपनी मनमर्जी के अनुसार कुछ नहीं कर सकता था। अतः परमेश्वर के पथ पर हम भी अपनी मनमर्जी नहीं कर सकते। पिता परमेश्वर बगैर, मसीह क्या कर सकता था? कुछ नहीं। मसीह बगैर हम क्या कर सकते हैं? कुछ नहीं (यूहन्ना 15:5)। मसीह के माध्यम से पिता परमेश्वर के लिए

क्या करना सम्भव था? सब कुछ (यूहन्ना 14:10-12)। हमारे द्वारा मसीह क्या कर सकता है? सब कुछ। इस सम्बन्ध में पवित्रशास्त्र से यूहन्ना 17:18 एवं 20:21 पर चिन्तन-मनन करना हितकर होगा। मसीह को, इस जगत् में पिता परमेश्वर पर आश्रित जीवन बिताने के लिए भेजा गया था। इसी प्रकार हम विश्वासियों को भी मसीह पर आश्रित जीवन बिताना है।

एक दिन जब नासरत नामक कस्बे के यहूदी सभाघर में प्रभु यीशु प्रवेश किया तो लोगों ने उससे यशायाह भविष्यवक्ता की पुस्तक से पढ़ने के लिए कहा। तब यीशु ने अपने बारे में उस पुस्तक की एक भविष्यवाणी पढ़ कर सुनाया। सुनने वालों ने उस पुस्तक की नबूवत को प्रतिज्ञात् उद्धारकर्ता के बारे में तो माना, किन्तु यीशु को ही वह उद्धारकर्ता मानने से इनकार कर दिया। उस भविष्यवाणी की कुछ बातें इस प्रकार हैं :- ''प्रभु का आत्मा मुझ पर है, क्योंकि उसने **कंगालों** को सुसमाचार सुनाने के लिए मेरा अभिषेक किया है। उसने मुझे भेजा है कि मैं **बन्दियों** को छुटकारे का और **अन्धों** को दृष्टि पाने का संदेश दूँ और **दलितों** को छुड़ाऊँ, और प्रभु के अनुग्रह के समय की उद्घोषणा करूँ''। यहाँ **''कंगालों''** का तात्पर्य आर्थिक घटी-कमी से नहीं है, बल्कि आत्मिक कंगालपन है। आत्मिक तौर पर कंगाल होने का मतलब है, अपने धर्म-कर्म के बल पर परमेश्वर को प्रसन्न करने की अयोग्यता अथवा परमेश्वर के प्रति अपने पापों व अपराधों के बदले ईश्वरीय न्याय की माँग को पूरा करने में असमर्थता। जो लोग यह विश्वास करते हैं कि यीशु मसीह उनको छुटकारा देने वाला मुक्तिदाता है, उन्हें वह अनन्त जीवन रूपी दान देता है। अपने पाप व पापीपन के बोझ से दुःखी व दबे लोगों को मसीह उनके पाप के रोग से चंगा करने आया। इसी प्रकार ''बंदियों'' से तात्पर्य है, शैतान की अधीनता व बन्धन। हममें से प्रत्येक जन शैतान के बन्दी के रूप में जन्म लेता है; परन्तु प्रभु यीशु मसीह हमें इस बन्धन से छुटकारा देता है। इसके अलावा मसीह ''अन्धों को दृष्टि'' देने आया। यहाँ अन्धेपन का मतलब है कि हममें से हरेक जन सच्चे परमेश्वर तथा सच्चे उद्धार के बारे में अज्ञानता की

अवस्था में पैदा हुआ है। अपने झूठ-फरेब के द्वारा शैतान हमें सत्य-ज्ञान से दूर व वंचित अर्थात् अन्धा बनाए रखता है। परन्तु प्रभु यीशु मसीह हमारी आध्यात्मिक आँखों को खोलने आया, ताकि हम सत्य को जानें-पहचानें और उद्धार पाएं। प्रभु यीशु ने यशायाह नबी की उस भविष्यवाणी से अन्ततः यह पढ़कर सुनाया कि वह ''**दलितों** को छुड़ाने'' आया है। यहाँ ''दलितों'' का अर्थ यह है कि दुष्ट शैतान हमें बर्बाद करने पर तुला है, और हमें अपने साथ नरक का भागीदार बनाना चाहता है। वह यह चाहता है कि लोग उसकी सत्ता के अधीन कठिनाईपूर्ण, कष्टपूर्ण एवं भयग्रस्त जीवन व्यतीत करें। परन्तु प्रभु यीशु मसीह इसलिए आया कि हमें शैतान के राज्य से छुड़ाकर परमेश्वर के राज्य में दाखिल व स्थापित करे। इसके लिए हमारे पाप के कर्ज़ की कीमत मसीह द्वारा चुकायी जा चुकी है, और क्षमा-दान हासिल किया जा चुका है।

प्रभु यीशु द्वारा दुष्टत्माग्रस्त लोगों में से दुष्टत्माएं निकालना, रोगियों को चंगा करना और मृतकों को पुनः जिला देने जैसे आश्चर्यकर्म इस सच्चाई के पक्के प्रमाण थे कि शैतान के बन्धन से छुटकारा देने वाला प्रतिज्ञात् उद्धारकर्ता वही है। उसने लाजर नामक चार दिन के एक मुर्दे को भी पुनः जिन्दा कर दिया था। यह अद्‌भुत घटना यूहन्ना के सुसमाचार के ग्यारहवें अध्याय में लिपिबद्ध है। प्रभु यीशु ने यह सभी महान आश्चर्यकर्म पवित्र आत्मा की सामर्थ्य से किए।

बहुत से लोग प्रभु यीशु के अनुयायी हो लिए थे। इन अनेक लोगों में से ''बारह'' को उसने अपने शिष्य के रूप में चुना। प्रभु यीशु ने इन खास शिष्यों को ही सबसे पहले अपनी संगति में बुलाया कि वे उसे जाने-पहचानें, उससे सीखें तथा उसकी संगति-सहभागिता से प्राप्त अपने अधिकार को समझें। तत्पश्चात् उसने उन्हें सेवाकार्य के लिए भेजा। इस धरती पर तीन साल तक की अपनी शिक्षा-सेवा के दौरान प्रभु यीशु ने इन शिष्यों को शिक्षा देकर तैयार किया, ताकि उसके प्रस्थान के बाद वे उसकी शिक्षा-सेवकाई को ज़ारी रखें। इस प्रकार

कलीसिया को विकसित होना व बढ़ते रहना था। यहूदा इस्करियोती के अलावा इनमें से सभी शिष्य प्रभु की शिक्षा के शिक्षक हुए।

उस समय के कई लोगों ने यीशु को मसीह अर्थात् प्रतिज्ञात् उद्धारकर्ता मान कर ग्रहण किया। लेकिन अधिकतर यहूदी अगुवों ने उस पर विश्वास नहीं किया, हालाँकि उसने बहुत से आश्चर्यकर्म किए और पवित्र आत्मा की सामर्थ्य से दुष्टात्माओं को निकाला। इस प्रकार अब्राहम, इसहाक, याकूब और दाऊद से परमेश्वर ने जिस उद्धारकर्ता का वायदा किया था, उसे यहूदी अगुवों ने अस्वीकार कर दिया। अन्ततः वे उसे मार डालने का षडयंत्र रचने लगे।

<u>विचारणीय बाइबॅल-पद</u>

लूका 1:15-16 ,34 ,35 ,76 ; मत्ती 1:18-25 ; यूहन्ना 1:22-23 ; 3:27 ,30 ; मत्ती 3:11-16 ; मत्ती 4:1-11 ; लूका 4:14-17 ; यूहन्ना 5:19 ,30 ; 6:38 ; 14:10-12 ; यूहन्ना 15:5 ; 17:18 ; 20:21 ; मरकुस 1:34 ; यूहन्ना 11:41-44 ; मरकुस 3:13-19 ; मत्ती 4:19-20 ; मरकुस 6:7 ; 14:1।

10

विश्वासी-जीवन

मसीही जीवन जीना कठिन ही नहीं, बल्कि असम्भव है। कहने का मतलब यह है कि मसीह बगैर मसीही जीवन जीना असम्भव है। मानवीय बल-बुद्धि के सहारे मसीही (विश्वासी) जीवन व्यतीत नहीं किया जा सकता। इस सम्बन्ध में आदम से प्राप्त अपने पुराने (पाप) स्वभाव को नहीं भूलना है। जब हम (पवित्र) आत्मा के चलाए नहीं चलते, बल्कि शारीरिकता अर्थात् पाप-स्वभाव के अनुसार जीवन आचरण करते हैं, तो (परमेश्वर की दृष्टि में) सब कुछ व्यर्थ होता है। पवित्रशास्त्र हमें यह दर्शाता है कि हमारा पुराना मनुष्यत्व भ्रष्ट है, और आदम से प्राप्त पाप-स्वभाव मसीह के साथ क्रूसित किया जा चुका है। आत्मिक विश्वासीजन यह जानता है कि (परमेश्वर की दृष्टि में) पुराना पापी आदम-स्वभाव सत्ताच्युत या शक्ति-विहीन कर दिया गया है; और अब विश्वासीजन आत्मा के चलाए चलने के लिए स्वतंत्र है।

आइए, इस बात पर और आगे विचार करें कि मसीह बगैर मसीही (विश्वासी) जीवन असम्भव है। इस प्रसंग में मसीह द्वारा किए गये असम्भव कार्यों पर ध्यान देना सहायक होगा। मसीह द्वारा किए गये अनेक असम्भव कामों में से एक का विवरण मरकुस 6:30-44 में पाया जाता है - ''पाँच हजार लोगों को भोजन देना''। जब इतने लोगों को भोजन देने का सवाल आया तो चेलों ने उसी प्रकार का समाधान (सवाल) रखा जैसा कि सांसारिक मनुष्य करते हैं - इतनी बड़ी भीड़ के लिए भोजन हेतु इतना अधिक पैसा या भोजन कहाँ व कैसे मिले? मरकुस 6:36 में मानवीय एवं सांसारिक समाधान प्रस्तुत किया गया है। प्रभु यीशु द्वारा पेश किया गया समाधान सैंतीसवें पद में पाया जाता है - ''तुम ही उन्हें कुछ खाने को दो।'' चेलों की चिन्ता पैसे व भोजन सामग्री की मात्रा से जुड़ी थी। उनके लिए पैसा ही सबसे महत्वपूर्ण

था, भोजन ही सबसे महत्वपूर्ण था। **मसीह** उतना महत्वपूर्ण नहीं था। वहाँ, उस वक्त सृष्टि का मालिक उनके साथ था, किन्तु वे उसकी महत्ता के प्रति जागरूक नहीं थे।

केवल मसीह यीशु ही मसीही जीवन की व्याख्या एवं परिभाषा है। जैसे अपने भोजन का प्रबन्ध करने में वह लोग असमर्थ थे, उसी प्रकार हम भी अपनी शक्ति से मसीही जीवन जीने में स्वयं को असमर्थ पाते हैं। यदि हमारे (मसीही) जीवन की मानवीय व्याख्या सम्भव है तो मसीही जीवन में होने के बावजूद भी हम इसके वास्तविक आधार के अनुसार जीवन नहीं जी रहे हैं। तात्पर्य यह है कि मानव-प्रयास, इच्छा-शक्ति, योग्यता, रूपया-पैसा, साहस, बल-बुद्धि, समर्पण अथवा त्याग-तपस्या के नाम व आधार पर मसीही जीवन की व्याख्या, परिभाषा व मूल्यांकन प्रस्तुत करना इसे मानुषिक शक्ति-प्रदर्शन का उत्पादन दर्शाना है। यदि हमारे मसीही जीवन-शैली का मानवीय शक्ति-प्रयास के रूप में व्याख्या व मूल्यांकन संभव है, तब तो हमारे जीवन और अविश्वासियों के जीवन में कोई भिन्नता नहीं। क्योंकि अविश्वासियों के जीवन की मानवीय व्याख्या व परिभाषा संभव है। तब उनके और हमारे जीवन में मात्र यही भिन्नता दिखाई देती है कि हम मजहबी लगते हैं।

लाजर नामक मृतक व्यक्ति का जिन्दा किया जाना भी मसीह द्वारा असम्भव को संभव बनाने का एक खास प्रमाण था। मत्ती रचित सुसमाचार के 14:22-32 को पढ़ने पर मसीह द्वारा एक अन्य असम्भव काम करने का ज्ञान प्राप्त होता है। इन पदों में दिए गये विवरण के अनुसार पतरस पानी पर तब तक चल सका जब तक कि वह प्रभु पर मन लगाए रहा। लेकिन जैसे ही उसका मन चहुँओर की परिस्थिति पर केन्द्रित होने लगा, तब वह डूबने लगा। इस सम्बन्ध में इस पाठ के अन्त में दिए गये मत्ती, मरकुस एवं लूका के सुसमाचारों के अन्य सन्दर्भों पर ध्यान-मनन करना सहायक सिद्ध होगा।

रोमियों की पुस्तक के आठवें अध्याय का सत्रहवां पद यह दर्शाता है कि मसीह के साथ हम सह-उत्तराधिकारी हैं। अर्थात् यदि हम

सचमुच उस पर आशा-भरोसा रख कर विश्वास के सहारे जीवन व्यतीत करते हैं; तो 'वह जो कुछ है और जो कुछ उसका है, वह सब हमारा है। हमारे जीवन एवं हमारी ईश्वर-निष्ठा के लिए जो कुछ ज़रूरी है वह सब प्रभु हमें प्रदान कर चुका है - अर्थात् ख्रीष्त ही मसीही विश्वासी का जीवन है; वही विश्वासी जन का जीवन-स्रोत है'। विश्वास के सहारे जीवन बिताने के संदर्भ में कुलिस्सियों 3:3-4 का यह वाक्यांश अत्यंत महत्वपूर्ण है :- ''मसीह जो हमारा जीवन है''। मसीही जीवन इसलिए संभव है क्योंकि जैसे-जैसे विश्वासीजन मसीह पर, जो उसका जीवन है आशा, भरोसा व विश्वास-विश्राम करना सीखता है; वैसे-वैसे पवित्र आत्मा उसमें ख्रीष्त का जीवन पुनरुत्पादित करता जाता है।

विचारणीय बाइबॅल-पद

यूहन्ना 3:6 ; 6:63 ; रोमि0 7:18 ; 8:6 ; 8:8 ; फिलिप्पियों 3:3 ; गला0 2:20 ; रोमि0 6:6 ; गला0 5:24 ; मरकुस 6:30-44 ; मत्ती 14:22-32 ; मत्ती 19:26 ; मर0 10:27 ; लूका 18:27 ; रोमि0 8:17 ; कुलु0 3:3-4।

11

प्रभु यीशु : सेवा एवं शिक्षा

यहूदियों के फसह नामक पर्व का समय था। मसीह यीशु के बलि होने (मृत्यु) का समय आ गया था, और इसे समझते हुए वह फसह-भोज में अपने शिष्यों के साथ समय व्यतीत करना चाहता था। मृत्यु से पूर्व अपने शिष्यों को मौलिक सच्चाईयाँ सिखाने के इस आखिरी अवसर पर, प्रभु ने अपने साथ उनकी आध्यात्मिक एकता रूपी सच्चाई पर विशेष बल दिया। यूहन्ना के सुसमाचार के तेरहवें अध्याय के तीसरे पद पर ध्यान देने से स्पष्ट है कि मसीह यीशु अपने पिता परमेश्वर के साथ अपनी संगति, एकता एवं अधिकार की समझ व प्रेरणा से लोगों को प्रेम करता रहा।

इसके विपरीत यूहन्ना के तेरहवें अध्याय में पतरस की उन बातों पर ध्यान दें जिन्हें उसने प्रभु परमेश्वर पर आशा-भरोसा रखे बगैर तथा मसीह के साथ अपनी एकता को समझे बगैर कहा। सैंतीसवें पद में वह यह घमण्ड करने लगा कि मसीह के लिए अपना प्राण दे देगा। पतरस अपनी शारीरिकता के चलाए चल रहा था; और जैसा कि हम जानते हैं वह मसीह के लिए अपना प्राण नहीं दिया, बल्कि मसीह का तीन बार इनकार किया। प्रभु की भेड़ों की देखभाल करने का दायित्व उसे बाद में सौंपा गया (यूहन्ना 21:15)। प्रभु के सच्चे सेवक होने के इच्छुक लोगों को अपने बल-बुद्धि के सहारे प्रभु की सेवा करने की निरर्थकता पहचानना ज़रूरी है।

उस भोज के अन्त में प्रभु यीशु ने रोटी ली, उसे तोड़ा और यह कहते हुए अपने शिष्यों को खाने के लिए दिया : ''इसे लो यह मेरी देह है, जो तुम्हारे लिए दी जाती है''। तब उसने प्याला लिया और उन्हें पीने को दिया; और उनसे कहा कि यह उन्हें उसके लहू का स्मरण कराएगा, जो उसकी मृत्यु के द्वारा उनके पापों का दण्ड-मूल्य चुकता करने हेतु बहाया जाने वाला है।

प्रभु यीशु के चेले उससे यह सुनकर शोकित व भ्रमित थे कि आने वाले दिनों में उसकी मृत्यु सुनिश्चित है। जब प्रभु ने अपने मरने के बारे में उन्हें पहले से ही आगाह किया, तो वे उसे नहीं समझ सके। वे यह नहीं चाहते थे कि वह उनके पास से चला जाए। अतएव प्रभु यीशु ने उन्हें प्रोत्साहक सन्देश दिया। यूहन्ना रचित सुसमाचार के चौदहवें अध्याय के प्रारम्भिक पदों पर ध्यान दें। प्रभु यीशु ने अपने शिष्यों को यह भरोसा दिलाया कि यद्यपि वह उनके मध्य से चला जाएगा, तथापि उन्हें त्यागेगा नहीं। उसने उनसे कहा कि वह अपने पिता के घर जाने वाला है, जहाँ उसकी सन्तान के लिए स्थान तैयार करेगा। प्रभु यीशु ने दो बातों का वायदा किया :- उसके साथ रहने हेतु परमेश्वर की संतानों के लिए स्थान तैयार करना, और तत्पश्चात् उन्हें सदा सर्वदा अपने पास रखने के लिए लेने हेतु पुनः वापस आना। जैसे प्रभु परमेश्वर ने पुराना नियम-काल के **हनोक** नामक अपने दास को स्वर्ग में उठा लिया, उसी प्रकार वह अपने सभी सच्चे विश्वासियों को अपने पास ले जाने के लिए पुनः वापस आएगा। वर्तमान काल में वह अपने लोगों के लिए एक स्थान तैयार कर रहा है, और उसकी इच्छानुसार उसके लोगों को सावधानीपूर्वक उसके आगमन की प्रतीक्षा करते रहना है। प्रतिदिन, हमें इसी मनोवृत्ति में विश्वास का जीवन व्यतीत करना है, जैसे कि आज ही का दिन उसकी वापसी का दिन हो।

हाँ, मसीह ही *मार्ग* है, मसीह ही *सत्य* है, और मसीह ही *जीवन* है। यह जानना सबके लिए ज़रूरी है कि उद्धार का एकमात्र उपाय (मार्ग) यीशु मसीह ही है। प्रभु यीशु यह नहीं कहता कि मैं तुम्हें मार्ग दिखाऊँगा, बल्कि उसका कथन है कि ''मार्ग मैं ही हूँ''। यदि हम मसीही जीवन के मार्ग को ठीक से जानना-अपनाना चाहते हैं तो यीशु की ओर ही देखते रहना ज़रूरी है। प्रभु ने यह भी कहा है कि ''सत्य'' **वही** है। उसने यह नहीं कहा कि मैं तुम्हें सत्य की शिक्षा दूँगा, बल्कि उसने कहा, ''सत्य मैं ही हूँ''। अतएव यदि हम सत्य को जानना, पहचानना व अपनाना चाहते हैं तो यीशु की ओर ही देखते रहना है।

इसी प्रकार प्रभु यीशु ने यह भी कहा कि ''जीवन'' **वही** है। प्रभु ने यह नहीं कहा कि वह हमें एक प्रकार का जीवन देगा, बल्कि उसने कहा कि ''जीवन . . . मैं ही हूँ''। अतः जो लोग सच्चा मसीही जीवन जीना चाहते हैं उन्हें निरन्तर यीशु की ओर ही देखते रहना चाहिए।

इसके अलावा प्रभु के शिष्य यह भी सोच रहे थे कि यीशु के चले जाने के बाद उसकी तरह उन्हें सिखाने वाला, अगुवाई करने वाला तथा कठिन परिस्थितियों में उन्हें गाइड करने वाला कोई नहीं रहेगा। परन्तु यीशु ने वायदा किया कि वह अपने पिता से निवेदन करेगा कि वह उन्हें एक अन्य **सहायक** अर्थात् **पवित्र आत्मा** प्रदान करे, जो उसी की तरह इस धरती पर उनकी देखभाल करेगा। प्रभु यीशु ने कहा कि वह **सहायक** सदैव उनके साथ रहेगा। वह **सहायक** कौन है? परमेश्वर पवित्र आत्मा। उसे ''सत्य का आत्मा'' कहा गया है। प्रभु यीशु ने पवित्र आत्मा को ''सत्य का आत्मा'' कहा; क्योंकि पवित्र आत्मा ने अपनी अगुवाई में प्रभु के लोगों द्वारा परमेश्वर के वचन अर्थात् **सत्य** को बाइबॅल के रूप में लिपिबद्ध कराया। उसे ''सत्य का आत्मा'' इसलिए भी कहा गया है क्योंकि पवित्र आत्मा हमें सत्य की समझ (प्रकाशना) प्रदान करता है। पवित्र आत्मा के द्वारा ही हमें अपने पापीपन का ज्ञान हुआ, और अपने लिए उद्धारकर्ता की आवश्यकता को समझ पाए। वर्तमान आत्मिक विकास-पथ पर और अधिक सत्य का ज्ञान, प्रकाश व समझ भी पवित्र आत्मा ही प्रदान करता है। प्रभु यीशु के अनुसार (यूहन्ना 14:17), अविश्वासी लोग सत्य के प्रति अपनी अज्ञानता के कारण पवित्र आत्मा को नहीं जानते-मानते। पवित्रशास्त्र के अनुसार पवित्र आत्मा सिर्फ शिष्यों के ''साथ'' नहीं, बल्कि वह शिष्यों ''में'' रहता है। प्रभु ने अपने शिष्यों से कहा कि जैसे वह उनके साथ रहा वैसे पवित्र आत्मा भी उनके साथ होगा। इतना ही नहीं, बल्कि प्रभु ने कहा कि उसके शिष्यों में पवित्र आत्मा सदा सर्वदा तक वास करेगा। प्रभु यीशु के शिष्यों के लिए अभी भी बहुत कुछ सीखना ज़रूरी था। जो कुछ प्रभु सिखा चुका था उन सब बातों को याद करना भी ज़रूरी था। पवित्र आत्मा द्वारा उनकी शिक्षा जारी रहनी थी, और प्रभु ने उन्हें जो

कुछ सिखाया था वह सब पवित्र आत्मा द्वारा उन्हें स्मरण कराया जाना था।

प्रभु यीशु ने कहा ''मैं जीवित हूँ, इसलिए तुम भी जीवित रहोगे'' (यूहन्ना 14:19-20)। प्रभु के इस वचन से स्पष्ट है कि मसीह बगैर विश्वासियों में कोई जीवन नहीं। मसीही जीवन की परिभाषा का सारांश एक शख्स में निहित है, अर्थात् **मसीह**। अपने आप में कोई भी मनुष्य मसीही जीवन नहीं बिता सकता। केवल **मसीह** ही हममें तथा हमारे द्वारा वह जीवन जी सकता है। वह प्रत्येक विश्वासी में तथा प्रत्येक विश्वासी के द्वारा अपना जीवन जीना चाहता है। गलातियों की पत्री का यह वाक्यांश मसीह के साथ हमारी एकता को दर्शाता है : ''अब मैं जीवित नहीं रहा, परन्तु मसीह मुझमें जीवित है'' (2:20)। विश्वासियों को (नया) जीवन देने से पहले उसका अर्थात् मसीह का मरना आवश्यक था (यूहन्ना 12:24)। चूँकि हमारे बदले वह मरा, इसलिए उसके साथ हम भी मरे (देखें, रोमियों का छठवाँ अध्याय)। चूँकि वह गाड़ा गया, इसलिए उसके साथ हम भी गाड़े गये। चूँकि वह नये जीवन में जी उठा, इसलिए हम भी उसके साथ नये जीवन के लिए (में) जी उठे हैं। हम उसके जीवन के (में) सहभागी हुए हैं, न कि उसके जीवन के नकलची बने हैं। विश्वासियों के जीवन में मसीह (वास करता) है, और **मसीह में** विश्वासी लोग। ''मसीह में'' वाक्यांश नया नियम में लगभग एक सौ साठ बार प्रयोग हुआ है।

अतः स्मरण रहे कि अब चेलों के जीवन में पवित्र आत्मा वास करने आने वाला था (यूहन्ना 14:26)। इसके बाद प्रभु यीशु ने अपने साथ विश्वासियों की पहचान, एकत्व एवं सहभागिता को दाखलता और डालियों के उदाहरण द्वारा स्पष्ट किया : ''मैं दाखलता हूँ, तुम डालियाँ हो। जो मुझमें बना रहता है और मैं उसमें, वह बहुत फल फलता है, क्योंकि मुझसे अलग होकर तुम कुछ भी नहीं कर सकते'' (यूहन्ना 15:5)। हमारी निष्फलता व असफलताएं प्रभु यीशु के उपर्युक्त वचन की अभिपुष्टि करती हैं, क्योंकि उसका स्पष्ट कथन है कि ''मुझसे अलग

होकर तुम कुछ भी नहीं कर सकते''। जैसे कोई पक्षी हवा बिना उड़ नहीं सकता और मछली पानी बगैर तैर नहीं सकती; उसी प्रकार आध्यात्मिक तौर पर, मसीह बिना परमेश्वर की दृष्टि में हम भी कुछ नहीं कर सकते। बहरहाल, उन चेलों के लिए यह समझना बहुत कठिन था कि मसीह के प्रस्थान के पश्चात् भी सब कुछ और बेहतर दिशा में आगे बढ़ेगा (यूहन्ना 16:6-7)।

अविश्वासियों में पवित्र आत्मा वास नहीं करता, किन्तु उन्हें सत्य के बारे में सिखाता, समझाता व कायल करता है। पवित्र आत्मा उन्हें उनके पाप के प्रति कायल करता है। हाँ, सच्चे उद्धारकर्ता (मसीह) के प्रति अविश्वास रूपी पाप के प्रति उन्हें कायल करता है (यूहन्ना 16:8-9)। उस समय के यहूदी अगुवों ने मसीह यीशु को झूठा व्यक्ति कह कर बदनाम करना चाहा, और लोगों से यह कहा कि उसके आश्चर्यकर्म शैतान की सामर्थ्य से हैं। परन्तु यूहन्ना के सोलहवें अध्याय के दसवें पद से स्पष्ट है कि पवित्र आत्मा लोगों को इस सच्चाई के प्रति कायल करता है कि मसीह परमेश्वर की दृष्टि में पूर्णतः धर्मी है और पूर्णरूपेण ग्रहण कर लिया गया है, तथा इस सच्चाई को प्रमाणित करने हेतु प्रभु परमेश्वर ने उसे मृतकों में से तीसरे दिन जीवित भी कर दिया। मसीह यीशु तो सचमुच धर्मी था, लेकिन वह यहूदी अगुवे अधर्मी थे।

अदन की वाटिका में प्रभु परमेश्वर ने वायदा किया था कि प्रतिज्ञात् मुक्तिदाता द्वारा सर्प अर्थात् शैतान का सिर कुचला जाएगा। यह काम (वायदा) तब पूरा हुआ जब मसीह यीशु क्रूस पर मरा एवं पुनः जीवित हो उठा। अपनी मृत्यु एवं पुनरुत्थान के द्वारा शैतान पर यीशु मसीह विजयी हो चुका है। एक दिन शैतान सदा-सर्वदा के लिए नरक में डाल दिया जाएगा। अतः पवित्र आत्मा लोगों को यह दर्शाता है कि मसीह को अस्वीकार करने का दोष-दण्ड सुनिश्चित है, क्योंकि शैतान को मसीह पहले ही पराजित कर चुका है।

प्रभु यीशु ने अपने शिष्यों को लगभग तीन साल तक शिक्षा दी, किन्तु इसके बावजूद उन्हें बहुत कुछ सीखने की ज़रूरत थी। मसीह के स्वर्गारोहण के बाद पवित्र आत्मा उसके शिष्यों में वास करके, उन्हें अन्य आवश्यक सच्चाईयों को सिखाने वाला था। उपर्युक्त सब बातें प्रभु यीशु ने अपने शिष्यों को तब बतायीं, जबकि वह उनके साथ अन्तिम भोज में शामिल हुआ। उसके स्वर्गारोहण के बाद पवित्र आत्मा द्वारा उसके शिष्यों को सिखायी गई अन्य बहुत सी सच्चाईयाँ *नया नियम* की शेष पुस्तकों में लिखी हैं।

विचारणीय बाइबॅल-पद

यूहन्ना 13:1-15 ,37 ; लूका 22:54-62 ; यूहन्ना 21:15 ; मरकुस 14:22-24 ; यूहन्ना 14:1-20 ; गला0 2:20 ; रोमि0 6:11 ; प0कुरि0 15:10 ; यूहन्ना 12:24 ; रोमि0 6:4 ; प0कुरि0 1:30 ; यूहन्ना 15:5 ;14:26 ;16:6-15।

12

प्रभु यीशु : मृत्यु एवं पुनरुत्थान

अपने शिष्यों के साथ फसह-भोज खाने तथा पवित्र आत्मा के आगमन सम्बन्धी शिक्षा देने के बाद, प्रभु यीशु उनके साथ गतसमनी नामक बगीचे में गया। वह जब वहाँ पिता परमेश्वर से प्रार्थना कर रहा था, तब यहूदा इस्करियोती उसकी गिरफ्तारी के लिए सिपाहियों को ला रहा था। मसीह यीशु को यह ज्ञात था कि वे उसे गिरफ्तार करके बाद में मार डालेंगे, किन्तु उसने यह सब होने दिया जिससे हमारे पापों के दण्ड-मूल्य को वह चुकता कर सके। मरकुस रचित सुसमाचार के चौदहवें अध्याय के बत्तीसवें, सैंतीसवें एवं अड़तीसवें पद मसीही जीवन के संदर्भ में मानवीय अहं-शक्ति, इच्छा-शक्ति या कर्म-प्रयास की अयोग्यता व निरर्थकता को दर्शाते हैं।

पुनः जीवित होने के बाद और अपने स्वर्गारोहण से पूर्व प्रभु यीशु ने अपने शिष्यों के साथ कुछ और समय बिताया। अपने पुनरुत्थान के बाद उसने इस पृथ्वी पर कितना समय बिताया? अपने स्वर्गारोहण से पूर्व उसने क्या किया? **प्रेरितों के काम** नामक बाइबॅल-पुस्तक में इन प्रश्नों का उत्तर उपलब्ध है। पवित्र आत्मा ने लूका नामक व्यक्ति को गाइड करके **'प्रेरितों के काम'** नामक पुस्तक लिखवाया। लूका अपने पेशे से एक वैद्य था, और उसने दो पुस्तकें लिखीं - **लूका** रचित सुसमाचार तथा **प्रेरितों के काम**। प्रभु यीशु के स्वर्गारोहण के बाद उसके शिष्यों द्वारा किए गये कार्यों का **प्रेरितों के काम** नामक पुस्तक में वर्णन है। **प्रेरितों के काम** की पुस्तक थियोफिलुस नामक व्यक्ति के लिए लिखी गई थी, और उसके पहले अध्याय के आरम्भिक पदों में उस पुस्तक को लिखने का उद्देश्य दर्शाया गया है। अपने पुनः जीवित हो उठने की सच्चाई को सुप्रमाणित करने के लिए, प्रभु यीशु अपने पुनरुत्थान के बाद चालीस दिन तक इस धरती पर अपने शिष्यों के

साथ रहा। **प्रेरितों के काम** के पहले अध्याय के तीसरे पद में लिखा है : ''उसने अनेक ठोस प्रमाणों से उन पर अपने आप को जीवित प्रकट किया''। उसके पुनरुत्थान के ऐसे कुछ प्रमाणों का ज़िक्र मरकुस 16:9-15 में पाया जाता है।

प्रेरितों के काम 1:3 के अनुसार प्रभु यीशु अपने स्वर्गारोहण से पूर्व अपने शिष्यों को परमेश्वर के राज्य के बारे में बताता रहा। इसका तात्पर्य यह है कि उनके साथ पुराना नियम की भविष्यवाणियाँ इत्यादि स्मरण करते हुए मसीह यीशु उन्हें अपनी मृत्यु, गाड़े जाने व पुनः जीवित होने का उद्देश्य समझाता रहा। प्रभु ने कहा कि दूसरों के समक्ष उन्हें इन सब बातों की साक्षी होना ज़रूरी है। प्रभु यीशु ने कहा कि मसीह द्वारा किए गये काम के बारे में उनसे सुनकर जो लोग विश्वास करेंगे, वे परमेश्वर की संतान होंगे और अंधकार से ज्योति में प्रवेश करेंगे। अतः प्रभु ने उन्हें पवित्र आत्मा के लिए प्रतीक्षा करने का निर्देश दिया।

आगे की बातों पर विचार करने से पूर्व पवित्र आत्मा के बारे में पवित्र वचन की शिक्षा को पुनः स्मरण करना महत्वपूर्ण है। प्रथमतः हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि पवित्र आत्मा परमेश्वर है, जैसे कि पिता परमेश्वर और पुत्र परमेश्वर। एकमात्र त्रिएक परमेश्वर ने ही पृथ्वी, सृष्टि की अन्य सब चीज़ें तथा प्रथम मनुष्य (आदम) को रचा। आगे चल कर जब नूह ने जलप्रलय के बारे में लोगों को चेतावनी दी, तब पवित्र आत्मा ने ही लोगों से बात किया (उत्पत्ति 6:3)। इससे पहले हम देख चुके हैं कि **पुराना नियम** काल में परमेश्वर द्वारा निर्दिष्ट काम के लिए पवित्र आत्मा खास लोगों को सक्षम बनाता था। उदाहरण के लिए पवित्र आत्मा ने राजा के स्वप्न का अर्थ बताने के लिए यूसुफ को क्षमता प्रदान की। पवित्र आत्मा द्वारा ईश्वरीय निर्देश के अनुसार मिलाप तम्बू बनाने के लिए बसलेल को बुद्धि व क्षमता प्रदान की गयी। शाऊल को राजा बनाने के लिए पवित्र आत्मा ने ही अगुवाई की। शाऊल के मरने के बाद पवित्र आत्मा दाऊद पर आकर उसे एक बुद्धिमान एवं

अच्छा राजा बनाया। नबियों का मार्गदर्शन करते हुए ईश्वरीय वचन का सही-सही प्रचार, लेखन व प्रकाशन पवित्र आत्मा द्वारा ही सम्पन्न होता रहा। यूहन्ना बपतिस्मा देने वाले के पैदा होने से पूर्व ही पवित्र आत्मा ने उस पर नियंत्रण रखा। तत्पश्चात् पवित्र आत्मा की अगुवाई में ही उसने शिक्षा-प्रचार किया ताकि इस्राएली लोगों का मन प्रतिज्ञात् उद्धारकर्ता के आगमन हेतु तैयार हो। प्रभु यीशु मसीह के पैदा होने का समय आने पर पवित्र आत्मा द्वारा ही आश्चर्यपूर्ण एवं अद्‌भुत काम हुआ। यीशु की सारी शिक्षा, उसके सारे आश्चर्यकर्म, उसकी मृत्यु एवं उसका पुनरुत्थान, यह सब पवित्र आत्मा की सामर्थ्य एवं मार्गदर्शन में सम्पन्न हुआ।

क्रूस पर चढ़ाए जाने से पूर्व, यानि चेलों के साथ आखिरी रात्रि बिताते समय, प्रभु यीशु ने उन्हें यह शिक्षा दिया कि पवित्र आत्मा सिर्फ उनके साथ ही नहीं रहेगा, बल्कि उनके जीवन में सदा के लिए वास करेगा। **पुराना नियम** काल में जब पवित्र आत्मा किसी खास काम के लिए किसी खास व्यक्ति पर आता था तो उस काम के पूरा हो जाने पर पुनः वापिस चला जाता था। प्रभु यीशु ने अपने शिष्यों से वायदा किया कि अब जब पवित्र आत्मा आएगा तो उसके लोगों के जीवन में सदा काल के लिए वास करेगा, और उन्हें नहीं त्यागेगा। प्रभु यीशु ने वायदा किया कि शिष्यों को उसकी सारी आज्ञाओं को पूरा करने हेतु पवित्र आत्मा उन्हें सामर्थ्य प्रदान करेगा। **प्रेरितों के काम** के पहले अध्याय के आठवें पद में पवित्र आत्मा के आगमन के बारे में अन्तिम प्रतिज्ञा पाई जाती है। प्रभु यीशु ने कहा कि जब तक उन पर पवित्र आत्मा नहीं उतरता तब तक उनको यरूशलेम में प्रतीक्षा करना अत्यावश्यक है।

प्रभु ने कहा कि उसके शिष्यों को तथा आगे चल कर उसके अन्य सभी विश्वासियों को भी संसार के समक्ष इन बातों की साक्षी होना है। अर्थात् उसकी मृत्यु, उसके गाड़े जाने तथा उसके पुनरुत्थान की हमें ऐसी शिक्षा देनी है कि लोग प्रभु यीशु पर विश्वास करें। परन्तु यह

काम हम अपनी मानवीय क्षमता व बल-बुद्धि से नहीं कर सकते। यह सब पवित्र आत्मा के बल-बुद्धि एवं उसके सामर्थ्य से ही सम्भव है। केवल पवित्र आत्मा ही किसी अविश्वासी को पवित्र बाइबॅल को परमेश्वर का वचन मानने वाला विश्वासी बना सकता है। हाँ, लोगों को हम इतना सिखा-समझा सकते हैं कि उनके दिमाग में इन बातों की जानकारी हो जाए, लेकिन केवल पवित्र आत्मा ही उनके दिल में इन बातों का सच्चा ज्ञान-प्रकाश देकर विश्वास उत्पन्न कर सकता है। इसीलिए तो प्रभु ने विश्वासियों के जीवन में पवित्र आत्मा को स्थायी तौर पर वास करने हेतु भेजा है। अपने पुनरुत्थान के पक्के प्रमाण स्वरूप चालीस दिन तक प्रभु यीशु अपने शिष्यों के साथ रहा, और उनके जीवन में स्थायी वास करने आने वाले पवित्र आत्मा के बारे में शिक्षा दिया। इसके बाद उसका स्वर्गारोहण हो गया। प्रभु यीशु इस दुनिया में पुनः वापस आएगा, किन्तु अगली बार न्यायकर्ता के रूप में आएगा। परन्तु ऐसा करने से पूर्व वह अपने सभी विश्वासियों को बादलों में स्वर्ग पर उठा लेने के लिए आएगा। यह एक अत्यंत महत्वपूर्ण सच्चाई है। हम नहीं जानते कि वह कब वापस आएगा, किन्तु इतना सुनिश्चित है कि वह अवश्य वापस आएगा, और हमें उसके पुनरागमन की आशापूर्ण प्रतीक्षा करनी है। हो सकता है कि वह आज ही आ जाए।

विचारणीय बाइबॅल-पद

मर0 14:32 ,42-46 ,53-65 ;15:1-47 ;14:37-38 ;16:1-8 ; प्रेरि0 1:1-5 एवं 8-11 ; मर0 16:9-15 ; उत्पत्ति 6:3।

13

नया जन्म

इसमें कोई संदेह नहीं कि मसीह के सच्चे विश्वासी परमेश्वर की संतान हैं। परन्तु इस बात को ठीक से समझना बहुत महत्वपूर्ण है कि हम उसकी संतान कैसे हुए। इस संदर्भ में यह नहीं भूलना चाहिए कि हम अपनी महसूसियत, फीलिंग अथवा मनोवेग के आधार पर मसीही विश्वासी नहीं होते। इसके विपरीत, हम जिस पर विश्वास किए हैं और जिसे अपनाए हैं, उसके कारण विश्वासी हुए हैं। कुछ लोग यह दर्शाते हैं कि जब वे ठीक-ठाक, भला व दया-धर्म का काम करते हैं तो अपने आप को ''बचा हुआ'' या उद्धार-प्राप्त ''महसूस'' करते हैं। लेकिन जब अपने जीवन आचरण में ऐसा नहीं पाते तो वे अपनी उद्धार प्राप्त अवस्था पर शक करते हैं। बहरहाल, सच्चाई यह है कि मसीह की प्रतिस्थापन्न (एवजी) मृत्यु पर विश्वास ने हमें उद्धार प्रदान किया है; न कि हमारे भले कामों ने।

हमें प्राकृतिक या शारीरिक जन्म ने आदम की ओर से मृत्यु (अर्थात् परमेश्वर से अलगाव) रूपी उत्तराधिकार दिया। परन्तु हमारे आत्मिक जन्म अर्थात् **नया जन्म** के द्वारा प्रभु यीशु से हमें जीवन रूपी दान मिला है (कुलु0 3:4)। जब उसे अपना उद्धारकर्ता मान कर प्रभु यीशु पर हमने विश्वास किया, तब क्रूस पर उसके द्वारा किए गये कार्य मात्र को ही नहीं, बल्कि उस कार्य को सम्पन्न करने वाले को भी अपनाया। वह अपने पवित्र आत्मा द्वारा हमारे जीवन में आकर मसीह के जीवन-स्वभाव को उत्पन्न व विकसित करता है। मसीह पर विश्वास करने से आध्यात्मिक तौर पर, पिता परमेश्वर ने हमें आदम के ''पतित परिवार'' से निकाल कर मसीह में स्थापित कर दिया। अर्थात् प्रभु यीशु मसीह में नई सृष्टि के रूप में तैयार किए गये स्वर्गिक वंश का सदस्य बना दिया। **नया जन्म** के समय अपने पवित्र आत्मा के द्वारा प्रभु यीशु

मसीह हमारी आत्मा में प्रवेश किया। हमारे जीवन में उसके इस अन्तर्वास के द्वारा हम ''परमेश्वर पुत्र'' के साथ अनन्त एकता में सहभागी हैं।

अपने शारीरिक जन्म के समय हम स्वभावतः आदम के साथ एकत्व में थे। परन्तु अब हमारे आत्मिक जन्म के माध्यम से पिता परमेश्वर ने हमें ''अपने पुत्र अर्थात् मसीह'' में स्थापित कर दिया है, और इस प्रकार ''अपने एकलौते पुत्र'' के स्वभाव रूपी बीज का हमारे जीवन में रोपण कर दिया है। प्रभु परमेश्वर पर विश्वास करने का अर्थ है : जो कुछ वह देता है, उसे हम स्वीकार करते हैं। मसीही होने का अर्थ है : मसीह को अपनाना और उसी का वास-स्थान होना। कुछ लोग यह सोचते हैं कि मसीही होने पर उनके लिए उद्धार-प्राप्ति की 'महसूसियत' मिलते रहना चाहिए। अर्थात् वे सदैव अर्पण-समर्पण करने-कराने, प्रभु की माला जपने-जपाने या फिर बारम्बार प्रभु के लिए निर्णय करने-कराने की बात पर ज़ोर देते हैं। लेकिन **हमारे** यह सब **धरम-करम हमें मसीही नहीं बनाते**। प्रभु परमेश्वर ने केवल अपने एकलौते पुत्र को देकर ही हमें अनन्त जीवन दिया है। उसका ''एकलौता पुत्र'' सदा-सर्वदा तक जीवित है।

यह बात बिल्कुल **सच** है कि मसीह यीशु हमारे बदले मरने आया। इस **सच्चाई** पर विश्वास करने के द्वारा हमें **सचमुच** अनन्त जीवन मिलता है। हमने उसे अपनाया है या नहीं, इसकी **महसूसियत महत्वपूर्ण नहीं है**। खास बात यह है कि परमेश्वर का वचन कहता है कि **अपने बदले मसीह की मृत्यु एवं पुनरुत्थान रूपी सच्चाई पर विश्वास करने वालों को अनन्त जीवन मिल चुका है**। हमारी भूमिका सिर्फ इतनी है कि इस सच्चाई को विश्वास से स्वीकार करें (अपनाएं)।

परमेश्वर ने पहले मनुष्य को कैसा बनाया था (उत्पत्ति 1:26)? उसे परमेश्वर के स्वरूप में बनाया गया था। लेकिन हव्वा के शैतान की चाल में आने और आदम के पतन के पश्चात् क्या आदम-हव्वा परमेश्वर के स्वभाव में रह गये? नहीं। शैतान बड़ा खुश हुआ था, क्योंकि उसने

सोचा कि परमेश्वर की सृष्टि एवं योजना को बर्बाद करने में वह सफल हो गया है। परन्तु ***इब्रानियों*** की पत्री के पहले अध्याय के तीसरे पद पर विचार करने से स्पष्ट है कि परमेश्वर ने द्वितीय आदम के द्वारा अपनी अद्‌भुत योजना को पूर्ण किया। हमें **नया जन्म** के द्वारा **मसीह का जीवन** मिला है। इस प्रकार, हमारा पुनः परमेश्वर के स्वरूप में निर्माण हुआ है। अब जैसे-जैसे हम अपने इस नये जीवन में विकसित होंगे; वैसे-वैसे उस स्वरूप का प्रकटन भी और स्पष्ट होता जाएगा। मसीही जीवन का लक्ष्य यही है : अपने प्रभु के स्वरूप में बढ़ते जाना। ***रोमियों*** की पत्री के अध्ययन से विश्वासियों के जीवन-उद्‌देश्य सम्बन्धी और भी बातों का ज्ञान होगा। प्रभु परमेश्वर अपनी संतानों के जीवन में अनन्त ईश्वरीय उद्‌देश्य को कार्यान्वित (सफल) करेगा, अर्थात् धीरे-धीरे विश्वासी जन को अपने स्वरूप में ढालेगा (विकसित) करेगा। जैसे हम जीवन भर सीखते रहते हैं, उसी प्रकार अब अपने नये, अनन्त जीवन में भी हम प्रभु यीशु के बारे में अधिकाधिक सीखते, अपनाते व विकसित होते रहेंगे। *हे, विश्वासी जन स्मरण रहे कि अब प्रभु यीशु ही तुम्हारा जीवन है, और वह सदा, सर्वदा के लिए है। वह तथा उसका सब कुछ विश्वासियों का है।* मान लीजिए आपके देश का राजा या राष्ट्रपति आपकी दयनीय माली हालत को देख कर आपसे यह कहे - ''मैं तुम्हारी कठिनाई व गरीबी को देखकर बहुत दुःखित हूँ, लो पाँच लाख रुपये। यह तुम्हारी मदद के लिए है। या तुम चाहो तो मेरे साथ चलो और मेरे परिवार में मेरे एक संतान एवं उत्तराधिकारी की तरह निवास करो।'' इन दोनों प्रस्तावों में से कौन सा प्रस्ताव आप अपनाएँगे?

हमारे और आपके लिए प्रभु परमेश्वर द्वारा पूर्ण किया गया कार्य एवं आशीष राष्ट्राध्यक्ष के दूसरे प्रस्ताव के समान है। हमारा प्रभु परमेश्वर हमें सिर्फ पाप से उद्धार ही नहीं देता, बल्कि हमें अपने दरबार में ग्रहण करके अपनी संतान होने का अधिकार प्रदान करता है। इतना ही नहीं, बल्कि हमारी आध्यात्मिक उन्नति व विकास हेतु अपनी ओर से सब कुछ दे दिया है, यहाँ तक कि अपने आप को भी।

विचारणीय बाइबॅल-पद

यूहन्ना 1:12 ; कुलु0 3:4 ; दू0कुरि0 5:17 ; यूहन्ना 14:16 ,17 ,20 ; यूहन्ना 14:6 ; प0यूहन्ना 5:11-13 ; उत्पत्ति 1:26 ; इब्रा0 1:3 ; गला0 4:19 ; रोमि0 8:28-29 ; फिलि0 3:10 ; रोमि0 8:17 ; गला0 3:26 ; 4:7 ; यूहन्ना 17:1-3 ,22 ,24 ।

14

अनुग्रह आधारित परिवर्तन

परमेश्वर की संतान होना, परमेश्वर के अनुग्रह से ही सम्भव है। इसका मतलब यह है कि इसे हमने अर्जित नहीं किया है, यह तो एक अमूल्य उपहार है। परमेश्वर के अनुग्रह बगैर उद्धार असम्भव है। प्रभु परमेश्वर की मौलिक इच्छा थी कि मनुष्य को वह अपने स्वरूप में बनाये। शैतान ने इस उद्देश्य को नष्ट करने का प्रयास किया। परन्तु प्रभु परमेश्वर हमें छुटकारा प्रदान करके अपने मौलिक उद्देश्य को सफल कर रहा है, अर्थात् हमें अपने स्वरूप में ढाल रहा है।

पवित्र वचन की शिक्षा है कि मसीह यीशु ''उसकी (अर्थात् परमेश्वर की) महिमा का प्रकाश और उसके तत्व का प्रतिरूप है''। इसी यीशु के द्वारा ही पिता परमेश्वर हमारे लिए अपने मौलिक उद्देश्य को पूर्ण कर रहा है, अर्थात् अपने स्वरूप में परिवर्तित व विकसित कर रहा है। वास्तव में केवल परमेश्वर का अनुग्रह ही हमें उद्धार प्रदान किया है, और केवल परमेश्वर के अनुग्रह से ही हम मसीही जीवन जी सकते हैं। हाँ, प्रभु परमेश्वर ने ही हमें रचा, प्रभु परमेश्वर ने ही हमारा उद्धार किया है, और प्रभु परमेश्वर ही हमारे जीवन में कार्य करते हुए हमें उसकी भली-भावती इच्छानुसार जीवन जीने की क्षमता प्रदान करता है। पिता परमेश्वर की यह इच्छा है कि हम उसके पुत्र के समान हों।

विश्वासी जीवन के आरम्भ में, जब हमें उद्धार मिला तो संभवतः हमने अपने मन में कुछ परिवर्तन का अनुभव किया। संभवतः हमारा मन आनन्द व सन्तोष से भरपूर लगा, यीशु से उद्धार रूपी दान पाकर उसके प्रति हमारा मन प्रेम व आभार से भरा था, और इसके बारे में दूसरों को बताने का उत्साह था। इसके अलावा संभवतः हममें परमेश्वर के वचन को सीखने की भूख-प्यास थी और दूसरों को सिखाने की

इच्छा भी थी। यह सब बातें, अनुभूतियाँ एवं इच्छाएं ठीक हैं। किन्तु समय के साथ प्रायः कुछ फर्क आने लगता है। आगे चलकर अक्सर ऐसा देखने को मिलता है कि ये सब बातें, अनुभव, उत्साह एवं इच्छाएं लुप्त होने लगती हैं। सम्भवतः अपने उद्धार के प्रति हमारा वही ज़ोश नहीं रह जाता, प्रभु के प्रति प्रेम में ठंढापन आने लगता है, और कभी-कभी तो हमें ऐसा लगने लगता है जैसे कि हमारा कार्य-व्यवहार और बात-विचार पहले के उद्धार-विहीन अवस्था जैसा ही है। अपनी इस हालत को देखकर हममें से अधिकतर विश्वासी और अधिक धर्म-कर्म की कोशिश से अपने प्रारम्भिक मसीही अनुभव, उत्साह एवं ज़ोश को वापस लाने का प्रयास करते हैं। लेकिन जितना अधिक हम कोशिश करते हैं, उतना ही अधिक विफल होते हैं (रोमि0 7:21,24)। मसीही जीवन जीने के इस संघर्ष एवं विफलता द्वारा प्रभु परमेश्वर अपने विश्वासियों को एक खास सबक सिखाना चाहता है - हम अपनी ताकत से मसीही जीवन नहीं जी सकते, और परमेश्वर की सहायता मात्र ही पर्याप्त नहीं है। ज़रा सोचें! क्या प्रभु परमेश्वर ने उद्धार पाने में हमारी मदद किया, या उसी ने हमारा उद्धार (सारा काम) किया? हम तो अपने आप को बचाने में पूर्णरूपेण असमर्थ थे। इसी प्रकार मसीही जीवन अपनी सामर्थ्य से व्यतीत करने में भी हम बिल्कुल असमर्थ हैं। इस संदर्भ में कुलुस्सियों की पुस्तक के दूसरे अध्याय का छठवां पद नहीं भूलना चाहिए।

अब जो नया जीवन हमें मिला है, वह प्रभु का जीवन है, मसीह का जीवन है। इस जीवन को जीने हेतु उसी को हमारे जीवन द्वारा जीना है, अर्थात् हमारे वास्ते मसीह का हममें जीना। यह सिर्फ उसकी सहायता मात्र नहीं है, बल्कि हमारे जीवन में उसका जीवन। किसी वृक्ष पर ध्यान दीजिए! फल कहाँ लगते हैं? उस वृक्ष की डालियों में। फल को बढ़ने-पकने के लिए उन डालियों को भोजन-पानी चाहिए। यह भोजन पानी उन्हें कैसे मिलता है? क्या कोई डाली स्वयं जाकर भोजन पानी का प्रबन्ध करती है? नहीं। डालियों में फल लगने व बढ़ने-पकने हेतु जो कुछ चाहिए उसके लिए डालियाँ उस वृक्ष के

तने व जड़ पर ही आश्रित रहती हैं। यही तथ्य हमारे मसीही जीवन के लिए भी सच है। पवित्र वचन के अनुसार, हम डालियाँ हैं और प्रभु यीशु दाखलता (जड़-तना) है। यदि हममें फल लगने (आत्मा के फल, फलवंत जीवन) की क्षमता आनी है तो हमें निरन्तर प्रभु पर आश्रित रहना यानि उसी पर आशा-भरोसा रखना सीखना है जिससे कि वृक्ष की डालियों की तरह, हमारे द्वारा वह अपने फल पैदा कर सके। यदि हम पवित्र आत्मा पर आशा-भरोसा रख कर मसीह के जीवन-स्वभाव को अपने जीवन में फलवंत होने देने के बजाय अपने सुकर्म व स्वप्रयास के सहारे ही अपना आत्मिक जीवन जीना चाहेंगे, तो मसीह के जीवन से कट जाएंगे और सूखे हुए मसीही की तरह मुर्झा जाएंगे।

प्रभु परमेश्वर अपनी प्रत्येक संतान के लिए एक खास मार्ग तैयार किए हुए है, जिस पर वह उन्हें ले जाना चाहता है। धीरे-धीरे, जब हम उसी पर पूर्णतः आश्रित होकर मसीही जीवन जीना सीखने लगते हैं, तब हम सच्चा आत्मिक विकास करते हैं और परमेश्वर की इच्छानुसार तैयार किए गये मार्ग पर अग्रसर होते हैं। इस प्रकार हम यह सीखते हैं कि परमेश्वर के *अनुग्रह* से ही हमें उद्धार मिला है, और उसके *अनुग्रह* मात्र से ही हम आत्मिक परिपक्वता में विकसित होते हैं। इतना ही नहीं, बल्कि उसकी सेवा भी सिर्फ उसके *अनुग्रह* द्वारा ही संभव है। प्रभु परमेश्वर का यह वायदा है कि उसकी इच्छानुसार कार्य करने के लिए वह सारी आत्मिक योग्यता व क्षमता प्रदान करेगा। यह सुन कर कुछ लोग असावधानी, लापरवाही या सुस्ती का रवैया अपनाने लगते हैं। वह यह सोचने लगते हैं कि 'यदि सारा काम प्रभु ही करता है, तो मैं तो हाथ पर हाथ धर कर आराम करूँगा, मुझे कुछ नहीं करना है, मैं उसके काम करने की बाट जोहूँगा'। ऐसी सोच रखना, परमेश्वर के अनुग्रह तथा उस पर पूर्णतः आश्रित रहने एवं उसी पर आशा-भरोसा रखने सम्बन्धी शिक्षा का, अनुचित अर्थ लगाना है। इस प्रसंग में पहला कुरिन्थियुस 15:10 पढ़ कर विचार करना सहायक होगा। प्रभु के लोगों के लिए सेवा-कार्य की कमी नहीं है। उसकी ओर से उसके लोगों के लिए सेवा-कार्य के बहुत से अवसर उपलब्ध हैं। यहाँ

खास बात यह है कि सेवा-कार्य कैसे होना है। हमें स्मरण रखना चाहिए कि उसकी सामर्थ्य-प्रदायी सामर्थ्य के लिए हमें सदैव उसी पर आशा-भरोसा रखना है।

विचारणीय बाइबॅल-पद

रोमि0 6:23 ; इफि0 2:8 ; कुलु0 2:6 ; फिलि0 2:13 , 4:13 ; यूहन्ना 15:5 ; दू0कुरि0 4:11 ; रोमि0 7:21 ,24 ; इफि0 2:10 ; दू0कुरि0 9:8 ; प0कुरि0 15:10।

15

विश्वसनीय परमेश्वर

यह समझना बहुत ज़रूरी है कि परमेश्वर हमारे मसीही जीवन में असफलता एवं पराजय को क्यों आने देता है। उत्तर स्पष्ट है - हमारे आध्यात्मिक विकास, परिपक्वता एवं फलवंतता के लिए। रोचक है कि प्रभु परमेश्वर ने उद्धार के समय प्राप्त हमारे नये स्वभाव के साथ, आदम से प्राप्त हमारे पुराने स्वभाव को अभी हममें रहने दिया है। अतः विश्वासी जन इस धरती पर अपने जीवन में शारीरिकता और **आत्मा** के संघर्ष का अनुभव करता रहता है (गला0 5:17-25)। प्रभु परमेश्वर हमें विफलता और पराजय के अनुभव से होकर इसलिए गुजरने देता है ताकि हम अपने घोर पापीपन की गम्भीरता को पहचानें। वह चाहता है कि हम अपने स्वार्थीपन तथा ईश्वर-विद्रोहीपन को पहचानें। जैसे-जैसे पवित्र आत्मा हमारे घोर पापीपन को हमें दर्शाता जाता है वैसे-वैसे हममें ईश्वरीय सत्य के प्रति भूख-प्यास बढ़ती जाती है।

उद्धार पाने से पहले हमने अपने पापीपन को पहचाना, नहीं तो हम अपने उद्धार की आवश्यकता को नहीं समझते। इसी प्रकार हमें अब यह जानना-समझना ज़रूरी है कि हम अपनी शक्ति से विश्वासी जीवन जीने में पूर्णतः असमर्थ, असहाय एवं अयोग्य हैं और प्रभु की सामर्थ्य बगैर मसीही जीवन नहीं जी सकते। इस तथ्य को पहचानने के बाद ही पवित्र आत्मा पर हम पूरा भरोसा रखने की ज़रूरत एवं महत्व को पहिचानेंगे कि **वह** हमारे जीवन में मसीह का जीवन अपनी सामर्थ्य से जीए। हमारे जीवन में पवित्र आत्मा द्वारा मसीह का जीवन जीने के लिए प्रभु परमेश्वर पर आश्रित रहना सीखने से पूर्व, यह पहचानना अत्यावश्यक है कि हम अपनी सामर्थ्य से मसीही जीवन नहीं जी सकते।

अपने विश्वासी जीवन-पथ पर असफलता एवं पराजय का अनुभव करने वाले कुछ मसीही अपने उद्धार के बारे में संदेह करने

लगते हैं - पता नहीं कि वास्तव में उद्धार मिला है या नहीं। अतः अपने उद्धार के विषय में कुछ खास बातों पर ध्यान देना बहुत महत्वपूर्ण है। पहली बात यह है कि अब हम परमेश्वर की संतान हैं, और परमेश्वर ने हमें अपने अनुग्रह से ग्रहण कर लिया है। उसने अपने ''पुत्र'' यीशु (के बलिदान) को जितना ग्रहण किया है उतना ही उसने (मसीह के द्वारा) हमें भी ग्रहण कर लिया है। हाँ, स्मरण रहे कि जितना मसीह को परमेश्वर ने ग्रहण किया है, उतना ही हमें भी ग्रहण कर लिया है। इसमें कोई संदेह नहीं है। हम सदा-सर्वदा तक पिता परमेश्वर को धन्यवाद दे सकते हैं कि उसके समक्ष हमारी स्वीकार्यता हमारे कामों पर निर्भर नहीं करती, बल्कि मसीह द्वारा पूरा किए गये काम पर।

बहुत से मसीही भले कामों में लगे हैं या फिर ऐसे काम कर रहे हैं; जिन्हें वे उचित कार्य समझते हैं, और अपने इन सेवा-कार्यों से स्वयं को अच्छा, संतुष्ट, धार्मिक व महत्वपूर्ण महसूस करते हैं। इस प्रकार वे यह समझते हैं कि परमेश्वर उनसे खुश है और इस कारण उन्हें ग्रहण करता है। लेकिन जब ऐसे मसीही इस प्रकार के काम नहीं कर पाते, या असफल व पराजित होने लगते हैं या किसी पाप में गिर जाते हैं; तो यह सोचने लगते हैं कि संभवतः अब परमेश्वर उनसे प्रसन्न नहीं है और शायद उन्हें न तो प्रेम करता है और न ही ग्रहण करता है। इस प्रकार की सोच गलत है और सत्य-शिक्षा पर नहीं, बल्कि झूठ पर आधारित है।

प्रभु परमेश्वर ने हमें अपनी संतान होने का अधिकार प्रदान किया है, और उसके समक्ष हमारी स्वीकार्यता उसके द्वारा दिए गये इस अधिकार पर ही आधारित है, हमारे द्वारा किए जाने वाले कार्यों पर नहीं। क्या अपने बच्चों को उनके अनुचित कार्य-व्यवहार के कारण हम अपने बच्चे नहीं मानते? क्या उन्हें त्याग देते हैं? नहीं। चूंकि वे हमारी संतान हैं, अतएव हम उन्हें अपनाते व प्यार करते हैं। लेकिन दूसरे लोगों के बच्चों को हम उनके चालचलन के आधार पर स्वीकार (पसन्द या नापसन्द) करते हैं, क्योंकि वे हमारे बच्चे नहीं हैं।

प्रायः जब हम कोई गलती या पाप कर देते हैं; तो शैतान हमारे ऊपर अंगुली उठाकर हमें दोषग्रस्त करना चाहता है। अक्सर ऐसे वक्त ही हमें यह याद रखना चाहिए कि परमेश्वर के समक्ष हमारी स्वीकार्यता मसीह द्वारा किए गये कार्य पर आधारित है, न कि हमारे कार्य-व्यवहार पर। प्रभु परमेश्वर ने हमें ''मसीह में'' स्थापित कर दिया है। हमें **मसीह का जीवन** मिला है। हमारी वर्तमान परिस्थिति में जैसे-जैसे मसीह के जीवन को पवित्र आत्मा हमारे अन्दर विकसित करेगा, वैसे-वैसे हम उसके स्वरूप में बदलते जाएंगे। परमेश्वर की संतान के तौर पर उससे प्राप्त इस अधिकार के कारण हमें शैतान की ओर से किए जाने वाले दोषारोपण की चिन्ता नहीं करनी है। परमेश्वर की अनुमति बगैर उसकी संतान के सिर का एक बाल भी नहीं झड़ेगा। शैतान हमारे जीवन की परिस्थितियों में उतना ही छेड़छाड़ कर सकता है, जितना प्रभु परमेश्वर उसे अनुमति देता है। शैतान तो हमें निराश करके परमेश्वर से दूर करना चाहता है, लेकिन शैतान की हरेक चाल को भी परमेश्वर हमारे जीवन में ईश्वरीय उद्देश्यपूर्ति हेतु इस्तेमाल कर लेता है।

विचारणीय बाइबॅल-पद

गला0 5:17-25; यूहन्ना 17:3; फिलि0 3:10; इफि0 1:5,6; कुलु0 3:3; दू0कुरि0 3:18; रोमि0 8:31,33; अय्यूब 1:6-2:10।

16

सुनिश्चित उद्धार

प्रभु के विश्वासियों के लिए उद्धार की निश्चयता का ज्ञान अत्यावश्यक है। यदि हम अपने उद्धार की निश्चयता के बारे में डगमगाते रहते हैं, तो हमारा मसीही जीवन आचरण भी अस्थिर होगा। मान लीजिए कि हमारे बच्चों को कोई यह झूठ सिखाने लगता है कि वे हमारी संतान नहीं हैं। जब तक उनको इस सच्चाई का पूरा विश्वास नहीं होगा कि हम वास्तव में उनके सच्चे माँ-बाप हैं, तब तक वे असुरक्षित महसूस करेंगे, और हमारे परिवार में अपनी स्थिति एवं अधिकार के बारे में भ्रमित होंगे। जो बच्चा अपने माँ-बाप के बारे में सुनिश्चित होता है और अपने परिवार में अपनी स्थिति व अधिकार को जानता है, उसके मन में विश्वास-भरोसा होगा, वह इस सम्बन्ध में अस्थिर या डाँवाडोल नहीं होगा।

हमारा नया जन्म तथा परमेश्वर के समक्ष हमारी स्वीकार्यता रूपी सच्चाई *पवित्र वचन* पर आधारित है, हमारी *महसूसियत* पर नहीं। परमेश्वर का वचन कभी नहीं बदलता। उसका वचन सदैव सत्य है। इसलिए **मसीह में** हमारी स्थिति व अधिकार सम्बन्धी सच्चाई भी अपरिवर्तनीय है। हो सकता है कि अपने दैनिक कार्य-व्यवहार के आधार पर हम कभी 'उद्धार-प्राप्त महसूस करें' या कभी-कभी 'उद्धार-प्राप्त न महसूस करें'; लेकिन विश्वासीजन के लिए यह सच्चाई अमर है कि उसे परमेश्वर की संतान होने का अधिकार प्राप्त हो चुका है, और यह सच्चाई बदली नहीं जा सकती। हमारे दिलो-दिमाग को परमेश्वर की संतान होने के अपने अधिकार पर भरोसा रखकर विश्वास-विश्राम करना है, न कि अपने दैनिक कार्य-व्यवहार पर। क्योंकि हमारे दैनिक कार्य-व्यवहार में बदलाव आता है। हाँ, शुरू में विश्वास में आने पर संभवतः हमने अपने जीवन में बहुत भिन्नता देखी - मन व आत्मा खुश एवं

संतुष्ट रहा, पहले जिन बुरे कामों को हम करते थे उनमें से कुछेक की आदत तुरन्त जाती रही, आनन्द व हर्ष महसूस हुआ। तब ऐसा लगा कि 'चूँकि मैं बचा हुआ महसूस कर रहा हूँ इसलिए मैं तो ज़रूर बचा हुआ हूँ।' बहरहाल, आगे चलकर एक दिन ऐसा लगा 'जैसे कि मुझे उद्धार-प्राप्ति की महसूसियत नहीं हो रही है, और शायद मैं बचा हुआ जन नहीं हूँ।' परमेश्वर के वचन के बजाय ऐसी महसूसियत के सहारे जीने वाले लोगों का परमेश्वर-प्रदत्त उद्धार पर से भरोसा डगमगाने लगता है; और वे अपने उद्धार पर शक करने लगते हैं - 'क्या सचमुच मुझे पाप-क्षमा व उद्धार मिल चुका है'? कुछ लोग अपने सेवा रूपी कर्म-प्रयास द्वारा स्वयं को पुनः उद्धार का आश्वासन देने की कोशिश करने लगते हैं, अर्थात् उन सब मजहबी क्रिया-कलापों व गतिविधियों द्वारा जिनसे वे पहले उद्धार-प्राप्त की महसूसियत पाते थे, और स्वयं को बचा हुआ दर्शाते थे। ऐसे लोग अपने उद्धार की निश्चयता अपने कार्य-व्यवहार पर केन्द्रित करते हैं, जो कि बदलता रहता है। इसके विपरीत, परमेश्वर की संतान होने का जो अधिकार हमें मिला है वह कभी नहीं बदलेगा, क्योंकि यह तो हमारे नहीं, बल्कि मसीह के काम पर केन्द्रित है। परमेश्वर के समक्ष हम इसी आधार पर ग्रहणयोग्य हैं। क्या मसीह का काम परमेश्वर के समक्ष कभी अयोग्य या नापसन्द साबित होगा? कभी नहीं। अतः परमेश्वर की संतान रूपी हमारा अधिकार भी हम नहीं खोते।

हमें अपने क्रिया-कलाप व सेवा-कार्य या अपनी गतिविधियों पर नहीं, बल्कि प्रभु परमेश्वर द्वारा किए गये कार्य पर तथा उससे प्राप्त पुत्रत्व रूपी अधिकार पर मन लगाना सीखना है। ऐसा करने वाले मसीही अपने उद्धार के प्रति सदैव सुनिश्चित रहेंगे। हमारे जीवन में उद्धार का सच्चा आश्वासन केवल पवित्र आत्मा ही प्रदान करता है। यह उसी का काम है। हमारे उद्धार की यह निश्चयता पवित्र आत्मा कहाँ सुस्पष्ट करता है? हमारी महसूसियत में? नहीं। प्रभु की आत्मा ने हमारे लिए यह सब परमेश्वर के वचन में स्पष्ट कर दिया है। परमेश्वर के वचन का अध्ययन करते रहने पर, परमेश्वर की आत्मा हमें हमारी

आध्यात्मिक स्थिति एवं अधिकार के बारे में सुनिश्चित करती है। परमेश्वर के वचन से पवित्र आत्मा हमें हमारे उद्धार की निश्चयता के बारे में और सुदृढ़ एवं सुनिश्चित करता है, तथा परमेश्वर के समक्ष हमारी स्वीकार्यता के प्रति हमें आत्मिक तौर से सच्चा आश्वासन प्रदान करता है। यह सुनिश्चयता, महसूसियत वाली सुनिश्चयता नहीं होती।

विचारणीय बाइबॅल-पद

दू0तिमु0 1:12 ; प0यूहन्ना 5:20 ; दू0तिमु0 1:9 ; रोमि0 8:16 ; प0यूहन्ना 5:10-13।

17

अनन्त उद्धार

हमारे उद्धार के बारे में एक अन्य महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि हमारा सदा-सर्वदा के लिए उद्धार हुआ है। यह अनन्त काल के लिए है। यह समझना और स्मरण रखना बहुत महत्वपूर्ण है। बहुत से लोग यह कहते हैं कि विश्वासीजन अपना उद्धार खो सकता है। ऐसे लोग यह कहते हैं कि अपने उद्धार में बने रहने हेतु हमें कुछ ''करना'' ज़रूरी है। अब प्रश्न यह उठता है कि क्या जब हम शुरू में उद्धार पाए तो यह हमारे किसी कार्य पर आधारित रहा? बिल्कुल नहीं। केवल परमेश्वर के अनुग्रह ने ही हमें उद्धार प्रदान किया है, और उसी के अनुग्रह से हम अनन्त काल के लिए उद्धार पाए हैं। यदि आपकी अन्तरात्मा में यह भरोसा है कि पिता परमेश्वर आपको ग्रहण कर चुका है और आप को यह ज्ञान-प्राप्त है कि आप (परमेश्वर के अनुग्रह से) उद्धार पा गये हैं; तो आप इस सच्चाई के बारे में भी सुनिश्चित रहें कि यह उद्धार-प्राप्त अवस्था शाश्वत काल तक नहीं बदलेगी। परमेश्वर की संतान होने का आपका अधिकार सदा-सर्वदा तक के लिए है, और यह अपरिवर्तनीय है।

स्मरण रहे, आपका उद्धार अनन्तकालीन है, अस्थायी नहीं। क्यों? क्योंकि हमें *प्रभु परमेश्वर ने* चुना व बचाया है। हाँ, सर्वशक्तिमान परमेश्वर अर्थात् सारी सृष्टि के सृष्टिकर्ता ने हमें अपनी संतान बनाया है। एक अन्य कारण यह है कि परमेश्वर हमसे प्रेम करता है। वह जैसे अपने ''एकलौते पुत्र'' को प्रेम करता है, **उसी प्रेम से** वह हमें भी प्रेम करता है। यीशु को पिता परमेश्वर से कुछ भी पृथक नहीं कर सकता, इसलिए हमें भी **उससे** कोई अलग नहीं कर सकता। इसके अलावा, परमेश्वर ने अपने वचन में इस बात का वायदा किया है कि उसके द्वारा प्रदान किया गया उद्धार शाश्वत है। जो उस पर उद्धारकर्ता के रूप में

विश्वास करते हैं, उनको नहीं त्यागने का **उसका** वायदा है। अपने सनातन प्रेम में, उसने अपने विश्वासियों को ग्रहण कर लिया है। अपने अद्‌भुत अनुग्रह द्वारा उसने हमें बचाया है, और उसका सुस्पष्ट वायदा है कि अपने विश्वासियों को वह नहीं त्यागेगा। जब इस सच्चाई का हमें ज्ञान व भरोसा होता है कि प्रभु परमेश्वर ने ***मसीह में*** हमें ग्रहण कर लिया है; हमें उद्धार की निश्चयता मिली है, और साथ ही साथ यह ज्ञान व भरोसा होता है कि यह उद्धार अनन्त काल के लिए है; तब इसी आधार पर हमारा मसीही जीवन विकसित एवं परिपक्व होता जाता है।

विचारणीय बाइबॅल-पद

रोमि0 4:5 ; इफि0 1:4 ,5 ; रोमि0 8:35 ,38 ; यूहन्ना 6:37 ; इब्रानी 13:5।

हमारे अन्य प्रकाशन

1. उत्पत्ति और उद्धार की कहानी (हिन्दी एवं नेपाली)
2. सुदृढ़ आधार (तीन खण्ड)
3. आत्मिक जन्म (हिन्दी एवं नेपाली)
4. आध्यात्मिक विकास के सिद्धान्त (हिन्दी एवं नेपाली)
5. उद्धार का अभिप्राय
6. प्रभु पर दृष्टि
7. पवित्र शास्त्र बाइॅबल की भविष्यवाणियां
8. प्रेरितों के काम (एक अध्ययन – हिन्दी एवं नेपाली)
9. क्रूस और विश्वासी
10. प्रभुज्ञान और प्रभु–भक्ति